RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18-2019-21

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
ब्रह्मज्ञान ही अमृत है।
सरसावा

तारतम मंजरी

वर्ष ५ अंक १ जनवरी २०२० बुद्धजी शाका ३४१ विक्रम सवंत २०७६ पृष्ठ संख्या ३२

ब्रह्मज्ञान ही अमृत है

प्रेम ही जीवन है

आध्यात्मिक उन्नति के आठ सूत्र

१. नियमित ध्यान
२. नियमित स्वाध्याय
३. सात्विक अल्पाहार
४. प्रबल पुरुषार्थ
५. परब्रह्म के प्रति समर्पण एवं गुरुजनों के कथनों के प्रति श्रद्धा
६. शिष्टाचार
७. दृढ़ संकल्प
८. अटूट आत्मविश्वास

स्वत्वाधिकारी

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड रोड, सरसावा, जिला-सहारनपुर, उ.प्र.

Email : shriprannathgyanpeeth@ gmail.com **Youtube**: SPJIN **Website**: www. spjin.org

Twitter : @Raajan Swami **Whats App**: +917533876060

अनुक्रमणिका

1.	सम्पादकीय – वास्तव में धर्म क्या है?		1
2.	बीतक समीक्षा – 5 – चितवनी का महत्व	कृष्ण कुमार कालड़ा	4
3.	वाणी का पारायण कैसे करें?	आचार्य सुभाष	6
4.	सखी री जान बूझ क्यों खोइए ...	जै किशन निजानंदी	10
5.	विराट पट : एक दिग्दर्शन	विनोद प्रसाद तिम्सिना	15
6.	अर्स दिल की न्यामतें	अमित निजनान्दी	18
7.	'दोपहर का सूरज' की संक्षिप्त भूमिका	अमर लाल सेठी	21
8.	हमारा समाज उन्नति के पथ पर	मधु सूदन मल्होत्रा	28

आवश्यक सूचना

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र, पन्ना एवं श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र, वड़ोदरा के लिए विशेष रूप से फोन नम्बर संचालित किया गया है। सभी सुन्दरसाथ से निवेदन है कि सरसावा, पन्ना, वड़ोदरा कार्यलय में सम्पर्क करने हेतु निम्नलिखित नम्बरों पर ही सम्पर्क करें :

सरसावा –	7088120381
पन्ना –	7088120382
वड़ोदरा –	7088120383

सदस्यता शुल्क

भारत में	विदेश में
वार्षिक 130 रू.	650 रू.
आजीवन 1200 रू.	.....

लेख में प्रगट किये गये विचार लेखक के व्यक्तिगत विचार हैं इनके प्रति सम्पादक, प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र सहारनपुर होगा।

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232
सम्पर्क सूत्र–8650851010

Youtube:SPJIN
वेबसाईट :– www.spjin.org
ई मेल :– shriprannathgyanpeeth@gmail.co

सम्पादकीय

वास्तव में धर्म क्या है?

धर्म विरोध का प्रथम कारण है धर्म के वास्तविक स्वरुप को न समझना। धर्म के वास्तविक स्वरुप को समझ लेने पर कोई धर्म का विरोध कर ही नहीं सकता।

धर्म शब्द धृ धातु से बना है जिसका अर्थ है धारण करना। धारणाद्धर्म, अर्थात जो सबको धारण करता है वह धर्म है, अथवा जिसको सब धारण करते हैं, जिसके बिना किसी का निर्वाह ही नहीं, जिस बात से कोई संसार का मनुष्य इंकार न कर सके उसे धर्म कहते हैं। जैसे सूर्य उदय होने पर उससे कोई इंकार नहीं कर सकता।

दूसरी बात ये है कि धर्म सारे संसार के लिए एक है, पृथक–पृथक नहीं। जैसे सूर्य सबके लिए एक है अलग अलग नहीं।

मनु ने क्रियात्मक धर्म का वर्णन किया है–

यथा धृति क्षमा दमोअस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रह।
धीर्विद्या सत्यम क्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ।।

1. धृति–धैर्य रखना।
2. क्षमा–निर्बलों पर दया करना क्षमा है, क्षमा वीरों का भूषण और कमजोरों का दूषण है।
3. दम–मन को वश में रखना दम है, बिना मन को वश में किये कोई कार्य सफल नहीं होता।
4. अस्तेय–सोते मनुष्य की वस्तु उठा लेना, पागल से कोई वस्तु छीन लेना या असावधान मनुष्य से विविध उपायों द्वारा छल करके किसी भी वस्तु को ले लेना चोरी है। वेद का आदेश है कि ''मा गृधः कस्य स्विद्धनम्'' कि किसी के धन का लोभ मत करो।
5. शौच–जल से शरीर की,सत्य से मन की,विद्या और तप से आत्मा की और ज्ञान द्वारा बुद्धि की शुद्धि करना शौच कहलाता है।
6. इन्द्रियनिग्रह–इन्द्रियों को वश में रखना रुप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि विषयों के मर्यादा विरुद्ध सेवन से बचना। याद रखो विष को खाने से मनुष्य मरता है परन्तु विषयों के स्मरण मात्र से ही मानव का नाश हो जाता है।

नाम अमृत को छोडकर करे विषय विष पान।
मन्द मति इस जीव को दे सुमति भगवान।।

7. धी–अर्थात बुद्धि के अनुकूल सोच समझ कर काम करना, बुद्धि विरुद्ध कार्यों से बचना।

वाणी दूषित विद्या बिन,मन दूषित बिन ज्ञान।
प्रभु चिन्तन बिन चित्त, और बुद्धि दूषित बिन ध्यान।।

8. विद्या–अच्छे शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करना और उनके अनुसार आचरण करना विद्या है।

9. सत्य–मन, वचन,कर्म की अनुकूलता का नाम सत्य है।

10. अक्रोध–किसी से वैर विरोध, क्रोध न करना।

नीति शास्त्र में निम्न लक्षण कहे हैं–

इज्याध्ययन दानानी तप सत्यं धृति क्षमा ।
अलोभ इति मार्गोऽयं धर्मस्याष्टविधस्मृत ।।

अर्थात यज्ञ करना, स्वाध्याय करना, दान देना, तप करना, सत्याचरण, धीरज धारण, क्षमा भाव रखना और लोभ न करना, ये धर्म के आठ लक्षण हैं।

धर्म का दूसरा लक्षण–

श्रूयतां धर्म सर्वस्वं,श्रुत्वा चौवावधार्यतां ।
आत्मन प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत।।

धर्म का सार सुनो और सुनकर मन में धारण करो, जो व्यवहार तुम्हें अपने लिए अच्छा नहीं लगता, वह दूसरों के लिए भी कभी मत करो।

वेदाज्ञा का पालन करना धर्म है–

धर्मादपेतं यत्कर्म यद्यपि स्यान्महाफलं ।
न तत सेवेत मेधावी न तद्वित मिहोच्यते।।

अर्थात बुद्धिमान व्यक्ति धर्मरहित (वेद विरुद्ध) महाफल देने वाले कर्म का भी सेवन न करे,क्योंकि धर्म विरुद्ध कर्म कभी भी हितकारक नहीं। वह कर्म पीछे कर्ता का समूल नाश कर देता है।

धर्म का चौथा लक्षण –

सीमानोऽनतिक्रमणं यत्तत् धर्मं'

सीमा या मर्यादा का अतिक्रमण न करना धर्म है।सब अपनी मर्यादा में चलें।स्वकीय कर्तव्य में तत्पर रहें। उसका उल्लंघन कभी न करें।

धर्म का पांचवां लक्षण–

जो प्राणीमात्र का कल्याण करने वाला कर्म है, जिससे प्राणीमात्र का हित हो, किसी का अहित न हो उसे धर्म कहते हैं।

यथा य एव श्रेयस्कर स एव धर्म शब्देन उच्यते,मीमांसा भाष्य सूत्र 12

जिस काम से सबका कल्याण हो उसे धर्म शब्द से कहा जाता है।

इसलिए पुराने लोग प्रात काल उठते ही ऊंचे स्वर से प्रार्थना करते सुनाई देते थे–

हे भगवान सबका भला,
सबके भले में हमारा भी भला।।

धर्म का छठा लक्षण–

योग के द्वारा आत्मदर्शन करना, अपने आपको पहचानना। मैं क्या हूं, मैं संसार में क्यों आया हूं मेरे जीवन का उद्देश्य क्या है। इस जीवन के पश्चात

क्या होगा इत्यादि,

अत अयं तु परमोधर्मोयण्योगेनात्मदर्शनं

परन्तु आज संसार अन्य वस्तुओं को जानने में लगा है। अपना पता ही नहीं।

धर्म का सांतवा लक्षण–

परमात्मा को सर्वज्ञ तथा सर्वव्यापक जानकर सब प्रकार के पापों से बचना, यथाशक्ति अपने आप को सब बुराईयों से बचाना चाहिये यही धर्म है।

धर्म का आठवां लक्षण –

विश्व की सेवा करना तथा परोपकार करना तथा किसी को किसी प्रकार से भी दुखी न करना, यथा

'परोपकाराय पुण्याय पापाय परपीडनं'

दूसरों का उपकार करना पुण्य और दूसरों को दुख देना पाप है।

धर्म का नवां लक्षण –

वेद स्मृति सदाचार स्वस्यच प्रियमात्मन।'

एतच्चतुर्विधं प्राहु साक्षाद्धर्मस्य लक्षणं।

मनु–2–12

जो वेदानुकूल है, वेदानुकूल स्मृतियों के अनुकूल है, सदाचारी धर्मात्माओं के आचरणानुकूल है और अपने को प्रिय लगने वाला व्यवहार है,वह धर्म है।

लेखकों के लिए आवश्यक सूचना

सुन्दरसाथ के चरणों में विनम्र प्रार्थना है कि जो भी सुन्दरसाथ लिखने में कुशल,योग्य है। जो अपना भाव तारतम वाणी और शास्त्रों के माध्यम से दूसरों तक पहुंचाना चाहते हैं ऐसे सुन्दरसाथ अपना लेख ईमेल (E-mail) या वटसप (watsapp) के माध्यम से ज्ञानपीठ में भेजें। लेख भेजने की अन्तिम तीथि प्रत्येक महिने की 1 तारिख तक रहेगी। समय पर भेजे गये लेखों को ही उस महिने की पत्रिका में प्रकाशित किया जायेगा।अन्यथा आगे आनेवाली महिनों में प्रकाशित की जायेगी।

लेख भेजने का नियम–
1–शुद्ध टाईप होनी चाहिए।
2–हस्तलिखित शुद्ध एवं स्पष्ट होना चाहिए।
3–टाईप किया गया लेख हो तो ओरजिनल कांपी होनी चाहिए।
4–डाक से ज्ञानपीठ के पते भर भेज सकते हैं।
5–हस्तलिखित लेख को PDF बनाकर ही भेजें, ताकि पढने में और टाईपिंग में असुविधा न हो।

तारतम मंजरी मासिक पत्रिका "लेख" प्रेषित हेतु एवं अन्य कोई भी असुविधा के लियें निम्नलिखित EMAIL और दूरभाष नम्बरों पर सम्पर्क करें।

tartammanjari@gmail.com

+9193141 93262 (जुनेजा बाबूजी)
+919725389547 (आचार्य सुभाष जी)

बीतक समीक्षा - ५

प्रस्तुति एवं प्रलेखन

कृष्ण कुमार कालड़ा, जयपुर

'तारतम मंजरी' के सितम्बर 2019 अंक से हमने पूज्य ***श्री राजन स्वामी*** *जी द्वारा वर्ष 2018 में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा में की गई बीतक चर्चा पर आधारित लेखों की एक श्रृंखला प्रारभ की है। इसमें प्रत्येक अंक में एक विशेष प्रसंग/घटनाक्रम का संक्षिप्त उल्लेख कर यह स्पष्ट करने का प्रयास किया जायेगा कि यह हमारे लिये क्यों महत्वपूर्ण है तथा इससे हमें क्या शिक्षा लेनी चाहिये। आशा है, पाठकों को यह श्रृंखला रुचिकर व उपयोगी लगेगी। आपके सुझाव सादर आमंत्रित हैं।*

– संपादक

नवतनपुरी की लीला –।।।

चितवनी का महत्व

नवतनपुरी की लीला के दौरान एक प्रसंग यह आता है जब श्री मिहिरराज सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी से हठपूवर्क कहते है कि "जब आपको परमधाम दिखता है तो मुझे क्यो नहीं दिखता?" उल्लेखनीय है कि सद्गुरू महाराज और श्री मिहिरराज का मिलाप वि. स. 1687 में हुआ था। उस समय श्री मिहिरराज की आयु मात्र 12 वर्ष से कुछ अधिक थी। यह मिलाप उनके बड़े भाई गोर्वधन ठाकुर के कारण हुआ जो धनी श्री देवचन्द्र जी की चर्चा सुनने जाते थे। तत्पश्चात् श्री मिहिरराज भी उनके साथ नित्य प्रति जाने लगे क्योंकि इससे उन्हें मन में बहुत आनन्द का अनुभव होता था। पच्चीस वर्ष की आयु तक वे चर्चा का रसपान करने के साथ कुछ लौकिक दायित्वों का निर्वहन भी किया करते थे। इस बीच वि.स. 1695 में उनका फूलबाई जी से विवाह भी हुआ।

बड़े भाई गोर्वधन जी के धामगमन के पश्चात् श्री मिहिरराज का मन पूरी तरह से संसार से हट गया। एक दिन अचानक उनके मन में विचार उपजा कि जब

सद्गुरू महाराज परमधाम के पच्चीस पक्षों की शोभा को साक्षात देखकर सबके समक्ष उनका वर्णन कर सकते हैं तो मैं ऐसा क्यों नहीं कर सकता?आखिर मैं भी तो उसी परमधाम से आया हूँ जहाँ हमारा मूल तन विद्यमान है जो अनादि काल से लीला कर रहा है। मेरे प्राणेश्वर अक्षरातीत, जिनकी मैं अंगना हूँ, मुझे क्यों नही दर्शन कराते?फिर उन्हें लगने लगा कि शायद उनके अन्दर मायाजनित विकार हैं जिन्हें यदि वे निकाल देंगे तो सम्भवतः उन्हें परमधाम दिखाई देने लगेगा। इसके पश्चात् उन्होंने कठोर साधना प्रारम्भ कर दी तथा अपना आहार भी नाम मात्र कर कर लिया। इससे उनका शरीर सूख कर कांटा हो गया। उन्होंने अपनी पत्नी के समस्त आभूषण भी माया का स्वरूप जान कर सद्गुरू महाराज के चरणों में समर्पित कर दिये। तब श्री देवचन्द्र जी ने उन्हें कहा कि निःसंदेहतुम परमधाम की आत्मा हो और तुम्हारे तन से ही जागनी की लीला होनी है। अभी चूंकि राज जी मेरे तन से लीला कर रहे हैं, अतः तुम्हें प्रत्यक्ष रूप से दर्शन नहीं हो सकते। मेरे पश्चात् जब वे तुम्हारे तन से लीला करेंगे तो तुम उनके दर्शन कर सकोगे।हाँ, चितवनी में अवश्य उनकी झलक मिल सकती है।

यहाँ यह प्रश्न उठता है कि क्या स्वंय को निर्विकार करने के लिये एवं आत्मा को जगाने के लिये अपने शरीर को कष्ट देना उचित है?क्या हठ योग से परमात्मा के दर्शन हो सकते हैं?इसका उत्तर 'न' ही होगा। यह स्वंय पर किया जाने वाला एक प्रकार से अत्याचार है जैसा कि बीतक साहब की एक चौपाई ;14ध्16द्ध में स्पष्ट रूप से कहा गया हैः

तिस वास्ते अपने मन पर, करते बड़ा जुलम।
कस्त अपने आकार को, जगावें अपनी आतम।

वस्तुतः मन अपनी पाँच ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से विषय ;शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंधद्ध रूपी लौकिक सुखों का उपभोग करता है। मन को निर्विकार बनाने हेतु उसे इन लौकिक सुखों से बलपूर्वक रहित कर देना स्वयं के ऊपर जुल्म करने के समान है। यह हठ योग का मार्ग है, जिसके द्वारा किसी भी स्थिती में परम तत्व की प्राप्ति नहीं हो सकती। यह केवल तारतम ज्ञान के प्रकाश में ह्रदय में विशुद्धविरह प्रेम के जाग्रत होने परही सम्भव होता है जब लौकिक सुखों से आसक्ति स्वतः ही समाप्त हो जाती है तथा मन भी निर्विकार हो जाता है।तत्पश्चात् चितवनी के द्वारा परमात्मा का साक्षत्कार भी किया जा सकता है। इसके बाद श्री मिहिरराज का मन भी न केवल शांत हो गया बल्कि चितवनी के द्वारा उन्होंने परमधाम के पच्चीस पक्षों की झलक भी पा ली तथा मूल–मिलावे में बैठी अपनी परात्म को भी देख लिया।

अतः बीतक का यह घटनाक्रम हमें यह शिक्षा देता है कि यहाँ बैठे–बैठ युगल–स्वरूप तथा परमधाम का दीदार एक मात्र प्रेममयी चितवनी के द्वारा ही सम्भव है। चितवनी की गहराईयों मे डूबकर ही हम परमधाम व युगल–स्वरूप के साक्षत्कार के अपने मूल लक्ष्य को इस संसार में रहते हुए प्राप्त कर सकते हैं। कभी–कभी वाणी पढ़कर, विशेषकर सागर, श्रृंगार, परिक्रमा व खिलवत ग्रन्थों के चिन्तन–मनन से हमे यह आभास होता है कि धाम धनी हमारे पास ही है परन्तु जब तक हमारी आत्मिक दृष्टि नहीं खुल जाती, उसे चितवनी की संज्ञा नहीं दी जा सकती। अतः हमें यदि शाश्वत आनन्द के शिखर पर पहुँचना है तो इसके लिये प्रेममयी चितवनी के अतिरिक्त कोई दूसरा विकल्प नहीं है।

वाणी का पारायण कैसे करें?

आचार्य सुभाष, श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

जो लोग श्रद्धा पूर्वक तारतम वाणी का अर्थ सहित पाठ करते हैं उन्हें पूरा लाभ होता है वे बातों को अच्छी तरह समझते हैं और उनको समझ कर आचरण में भी लाते हैं।

इस प्रकार से वे बुराई से बचकर अच्छे काम करते हैं। परंतु जो लोग श्रद्धा पूर्वक पाठ नहीं करते सिर्फ खानापूरी करते हैं तो उससे बहुत कम लाभ होता है। क्योंकि ऐसे पाठ में उनकी रुचि नहीं होती। रुचि ना होने से फिर विशेष लाभ नहीं होता।

वे दिखावे के लिए करते हैं तो कोई विशेष लाभ नहीं होता। बस इतना है कि जितनी देर तक पाठ करेंगे उतनी देर तक बुरे काम से निंदा चुगली लड़ाई झगड़ा आदि बुराइयों से बचे रहेंगे। बस इतना ही लाभ है। कुछ भी लाभ मिलता नही है।

हम कोई भी ग्रन्थ का पाठ करें उसमें श्रद्धा बहुत जरुरी है। अर्थसहित वेदाध्ययन के महत्व पर बल देते हुए महर्षि व्यास लिखते हैं–

यो हि वेदे च शास्त्रे च ग्रन्थधारणतत्परः।
न च ग्रन्थार्थतत्त्वज्ञस्तस्य तद्धारणं वृथा।।
भारं स वहते तस्य ग्रन्थस्यार्थं न वेत्ति यः।
यस्तु ग्रन्थार्थतत्त्वज्ञो नास्य ग्रन्थागमो वृथा।।
(महा. शान्ति. 305.13, 94)

जो वेद और शास्त्रों को कण्ठस्थ करने में तत्पर है, परन्तु उनके अर्थ से अनभिज्ञ है, उसका कण्ठ करना व्यर्थ ही है। जो ग्रन्थ के तात्पर्य को नहीं समझता, वह ग्रन्थ को रटकर मानो उसका बोझ ही ढोता है। परन्तु जो अर्थ ज्ञानपूर्वक पढ़ता है, उसका पढ़ना ही सार्थक है।

इसी तथ्य को महर्षि यास्क ने इस प्रकार प्रकट किया है–

स्थाणुरयं भारहारः किलाभूदधीत्य वेदं न
विजानाति योऽर्थम्।
योऽर्थज्ञ इत्सकलं भद्रमश्नुते नाकमेति
ज्ञानविधूतपाप्मा।।
(निरुक्त 1.18)

जो मनुष्य वेद पढ़कर उसके अर्थों को नहीं जानता, वह भारवाही पशु अथवा वृक्ष के ठूँठ के समान है, परन्तु जो अर्थ को जानने वाला है, वह

उस पवित्र ज्ञान के द्वारा अधर्म से बचकर परम पवित्र होता है। वह कल्याण का भागी होता है और अन्त में दुःखरहित मोक्ष–सुख को प्राप्त होता है।

सुन्दरसाथ जी! इस सन्दर्भ का यह अर्थ मत लगाइए कि हमें अर्थ नहीं आते, अतः पढ़ने से छुट्टी मिल गई। 'सत्य शास्त्रों का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना प्रत्येक मनुष्य का परमधर्म है।' प्रतिदिन स्वाध्याय कीजिए। न पढ़ने से पढ़ना उत्तम है।

"अर्थ ज्ञान सहित पढ़ने से ही परमोत्तम फल की प्राप्ति होती है, परन्तु न पढ़ने वाले से तो पाठमात्र कर्त्ता भी उत्तम होता है। जो शब्दार्थ के विज्ञानसहित अध्ययन करता है वह उत्तमतर है। जो तारतम वाणी का अध्ययन कर उसके अर्थों को जानकर वाणी के रहस्यों का ग्रहण और उत्तम कार्यों का आचरण करते हुए सर्वोपकारी होता है वह उत्तमोत्तम है।"

जो वाणी का पाठमात्र पढ़ के अर्थ नहीं जानता वह शास्त्रों के अनुसार जैसा वृक्ष, डाली पत्ते, फल, फूल और अन्य पशु धान्य आदि का भार उठाता है वैसे भारवाह अर्थात् भार को उठाने वाला है। और जो वाणी को पढ़ता है और उनका यथावत् अर्थ जानता है ज्ञान से पापों को छोड़ पवित्र धर्माचरण के प्रताप से वही सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होके देहान्त के पश्चात् सर्वानन्द अर्थात् मोक्षसुख को प्राप्त होता है।इसलिए शास्त्रों के अर्थज्ञानसहित पढना चाहिये।

यद् गृहितमविज्ञातं निगदेनैव शब्द्यते।
अनग्नाविव शुष्कैधो न तज्ज्वलति कर्हिचित्।।
(निरुक्त अ.1 खं.18)

जो मनुष्य केवल पाठमात्र के लिये पढता है, उसका वह पढना अन्धकार रुप होता है।जैसे अग्नि के बिना सूखे ईंधन में गर्मी और प्रकाश नहीं होता वैसे ही अर्थ ज्ञान के विना अध्ययन भी ज्ञानप्रकाश रहित रहता है। अर्थ ज्ञानरहित पढ़ना अविद्यारूप अन्धकार का नाश कभी नहीं कर सकता।

उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः शृण्वन्न
शृणोत्येनाम्।
उतो त्वस्मै तन्वं वि सस्रे जायेव
पत्य उशती सुवासाः।।
(ऋ मं० १०। सू० ७१। मं० ४।।)

जो अविद्वान् हैं वे सुनते हुए नहीं सुनते, देखते हुए नहीं देखते, बोलते हुए नहीं बोलते। अर्थात् अविद्वान् लोग इस विद्या वाणी के रहस्य को नहीं जान सकते किन्तु जो शब्द अर्थ और सम्बन्ध का जानने वाला है उस के लिये विद्या–जैसे सुन्दर वस्त्र आभूषण धारण करती अपने पति की कामना करती हुई स्त्री अपना शरीर और स्वरूप का प्रकाश पति के सामने करती है वैसे विद्या विद्वान् के लिये अपने स्वरूप का प्रकाश करती है, अविद्वानों के लिये नहीं।

न हि ज्ञानेन सशं पवित्रमिह विद्यते।
तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति।।
(गीता 4/ ३८)

इस संसार में ज्ञानके समान पवित्र (अन्य) कुछ भी नहीं है। तारतम वाणी भी कहती है–

विस्वास करके दौड़े जे,
तारतम को फल सोई ले।
तिन कारन करों प्रकाश,
ब्रह्मसृष्टि पूरन करुं आस।।
(प्रकाश 19/20)

तारतम ज्ञान का फल उसी सुन्दरसाथ को प्राप्त होगा जो तारतम ज्ञान के उजाले में श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप की पहचान करके उनके ऊपर अपना सर्वस्व समर्पण करेगा।केवल बिना अर्थज्ञानेन पाठ पढने वालों को अखंड का सुख लाभ कभी नहीं मिल सकता।

समझ बिना सुख पार को नाही

अच्छा बनने के लिए अच्छे कपड़े का होना पहनना जरूरी नही है। अच्छे कपड़े पहनने से कोई भी मनुष्य अच्छा नही बन जाता। इसके लिए दिल को साफ और पवित्र बनाना पड़ता है, तब जाकर कोई भी मनुष्य अच्छा कहलाता है।उसी प्रकार केवल हजार हजार पाठ पढ़ने की अपेक्षा उपने दिल को शुद्ध, पवित्र, निर्मल करके वाणी के वास्तविक रहस्य को समझ करके अपने दिल में युगल स्वरूप की शोभा, सिंगार को बैठाना ही तारतम वाणी के पठन–पाठन का रहस्य है।

ए जो जाग्रत वचन,
सुपन रहे ना आगूं जाग।
पर लिया ना सिर अपने,
तो रही सुपन देह लाग।।
(श्री किरन्तन 4/85)

जिस मनुष्य के हृदय में ब्रह्मज्ञान रुपी अग्नि जल रही होती है उसे संसार में कोई भी अज्ञानी दुख नहीं दे सकता।और जो अर्थज्ञान, अभिप्राय से रहित वाणी को सुनता और उपदेश करता है, उसको कभी कुछ भी सुख नहीं मिलता।किन्तु चिंता रुपी महाशत्रु उसको दिन–रात दुःख ही देते रहते हैं।क्योंकि यथार्थ विद्या से रहित होने के कारण से वह अज्ञानता, अविद्या आदि शत्रुओं को जीतने में सामर्थ्यशाली नहीं हो सकता।इसलिए अर्थज्ञानेन ही वाणी पढने से सुख और आनंद की अनुभूति होगी।

जो पाठ अर्थ जान करके आत्मिक सुखानुभूति हेतु की जाती है वह केवल शब्दों के उच्चारण रुप पाठ में कहाँ मिल सकती है। बिना अर्थ जाने केवल पाठ पढ़ने मात्र से अखंड परमधाम की पहचान, धामधनी की पहचान, निस्वत की पहचान कभी भी नहीं हो सकती।भले ही क्यों न वर्षों तक वाणी का अखंड पाठ पढा जायें।बिना अर्थज्ञान के मनुष्य अन्धे के समान होता है।अर्थज्ञान जाने बिना केवल

पाठ मात्र पढने से यथावत ज्ञान नहीं हो सकता।केवल दिखावे के लिये, मान सम्मान के लिये पाठ नहीं पढना चाहिए अपितु अर्थज्ञान सहित अवश्य पढ़ने चाहिए।इसी में मनुष्य मात्र का कल्याण है।

तारतम वाणी का पाठ अवश्य करें। केवल दिखावे के लिये जल्दबाजी में पाठ ना करें। श्रद्धा, समर्पण की भावना से युक्त होकर आत्मिक कल्याण हेतु पाठ करें। आजकल जो पाठ के नाम पर लूट मची हुई है ऐसे पाठ से समाज में कभी भी जनजागृति नहीं आ सकती।पाठ निस्वार्थ भावना से होना चाहिए। परन्तु आज समाज में पाठ के नाम पर अन्याय पूर्वक जो धन एकत्रित किया जा रहा है उस धन का सदुपयोग गरीब बच्चों की शिक्षा में होना चाहिए।

मन्दिरों में 16, 000 पाठों की परम्परा जोर शोर से चल रही हैं। एक सुन्दरसाथ से 5,000 की नौछावर लिये जाते हैं। इस प्रकार से लगभग 16,000 X 5,000 = 80,000,000 इतने करोड़ धन इकट्ठा किया जाता है। सजावट आदि में 2–3 करोड़ खर्च कियें जाते हैं। अन्य बचा हुआ धन व्यक्तिगत उपयोग में खर्च कियें जातें है। जिससे न तो समाज को कुछ मिला, न फायदा हुआ।गांव घर के गरीब सुन्दरसाथ दिन–रात मेहनत करके धन कमाता है और पाठ के नाम पर धन का हरण किया जाता है और बचे हुये धन का क्या किया जाता है हम सब को पता है?

यदि इसी धन को इकट्ठा करके वि वविद्यालय खोलें गयें होते तो आज हमारा समाज अन्य समाजों की तरह ही शिक्षा के क्षेत्र में भी बहुत आगे होता।लेकिन हमारे समाज के लोगों में नाचने, कूदने, लडाई, झगड़ा, ईर्ष्या, द्वेष के जंजाल में इतने भयंकर तरीके से फंसा हुआ है कि समाज के प्रबुद्धजनों से लेकर के सामान्य सुन्दरसाथ तक के हृदय में जब तक ब्रह्मज्ञान का प्रकाश यथार्थ रूप में नहीं होगा, जबतक हरेक सुन्दरसाथ श्रीराजजी के प्रेम में डुबकी लगाकर चितवनी की गहराइयों में नहीं जायेगा तबतक यथार्थ में ब्रह्मज्ञान का प्रकाश किसी के भी हृदय में प्रकाशित नहीं हो सकता।यदि हमें अपने दिल में अक्षरातीत धाम धनी को बिठाना है तो हमें अपने दिल में केवल श्रीराजजी को बैठाना होगा और संसारिक कर्मकांडों से दूर होकर निस्वार्थ त्रिगुणातीत प्रेम में डुबकी लगाना ही होगा।यही यथार्थ में आत्मजागृति का सोपान है।

सखी री जान बूझ क्यों खोइए, ऐसा अलेखे सुख अखण्ड

जै किशन निजानंदी, बोकाजान (आसाम)

अखंड सुख की प्राप्ति हेतु ऋषि–मनीषी युगों–युगों सें भक्ति तप–तपस्या ध्यान–साधना करते आए हैं। किन्तु तारतम ज्ञान के अभाव में उन्हें अखंड सुख का स्वाद भी चखने को नहीं मिला। मात्र अछर ब्रह्म की पंच वासनाओं ने ही बेहद के अखंड सुख का स्वाद अल्प मात्रा में चख पाया। परमधाम के अखंड सुखों की बू (सुगन्ध) तक नसीब उन्हें नहीं हुई। जब ऋषि–मुनि देव, और पंच वासनाओं का यह हाल है तो संसार के साधरण मनुष्यों के बारे में कहना ही क्या?

आज संसार का प्रत्येक मानव सुखी होना चाहता है और इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु वह एड़ी से चोटी तक का बल लगा देता है। बचपन गुजर जाता है। जवानी गुजर जाती है और अंततः वृद्धावस्था आ जाती है। सुख की चाहना में दुःख रुपी मरन सेज्या पर लेटे हुए न्नाहिमाम्–न्नाहिमाम् की रट लगा रहा है परन्तु सुख की प्राप्ति उन्हें नहीं होती। वास्तव में देखा जाए तो इस माया रुपी संसार में सुख है ही नहीं। इस संसार में अल्प समय के लिए मायावी क्षणिक सुख अवश्य मिलता है परन्तु वह भी अंततः दुःख का कारण ही सिद्ध होता है। इसलिए इस मायावी संसार में चाहे राजा हो या प्रजा, कोई भी कहीं भी सुखी नहीं है। इस विषय के सम्बंध में ज्ञानीजन ने कितना सत्य कहा है–

दान बिना निर्धन दुखी,
तृष्णा वश धनवान।
कहीं न सुख संसार में,
जो सब जग देखो छान।।

तारतम ज्ञान की नजर से देखें तो यह संसार असत्, जड़, दुःख के सिवाय और कुछ नहीं है। अखंड सुख तो मात्र परमधाम में ही है, जहां सत्–चिद्–आनन्द के सिवाय दुःख का नामो–निसान नहीं है। उस अखंड परमधाम में हम सभी आत्माएं सदा प्रेम–आनन्द के अखंड सुख के सागर में झीलना करते थे। किन्तु अखंड सुख की लज्जत क्या होती है, हमें पता नहीं था। इसलिए हमनें अपने प्राण–प्रियतम श्री राज जी से यह दुःख रुपि खेल मांगा, तांकि हमे परमधाम के अखंड सुख की लज्जत इस झूठे संसार में मिल सके।

सेहेजल सुख तुममें है सदा, अलप नहीं असुख।
तुम सुख का स्वाद लेने, खेल मांग्या दुःख।। क.
हि.16/50

श्री राजजी ने भी अपनी आत्माओं को अपने अखंड सुख की लज्जत दिलाने के लिए अपने हुक्म से इस मायावी झूठी दुनियां की रचना करवाई और अपनी आत्माओं की सुरता के द्वारा इस झूठे संसार में भेज दिया। श्री राज जी नें अपनी आत्माओं को इस झूठे संसार में भेजने से पहले उन्हें सावचेत करते हुए कहा था कि हे आत्माओं! तुम जिस दुःख रुपी खेल देखने हेतु आज बहुत उतावली हो रही हो, वह ऐसा मायावी तिलस्मी दुनियाँ है, जिसे देखने मात्र से ही तुम सब फरामोशी के बंधन में आ जाओगी अर्थात् तुम अपना सब कुछ भूल जाओगी। मैं अपने बेसक इलम द्वारा तुम्हारी खोई हुई स्मृतियों को वापस याद दिलाऊंगा, किन्तु तुम्हारे ऊपर माया का अमल इतना अधिक होगा कि तुम मेरी बात (इलम) को सुनोगी ही नहीं, सुनोगी भी तो उसे सिरे से नकार दोगी। तारतम ज्ञान को आत्मसात न करने के कारण तुम्हारी आत्मा माया की फरामोशी में रहेगी अर्थात वह जागृत नहीं हो पाएगी।

पर ऐसा देखोगे तिलसम,
जो सबे हुई फरामोस।
इलम देउं मेरा बेसक,
तो भी ना आओ माहें होस।। खि020।19

आज हमारी स्थिति भी यही है। हमारे पास बेसक इलम है और देखा जाए तो हम ज्ञान दृष्टी से जागृत भी हो चुके हैं। हद–बेहद–परमधाम का सारा ज्ञान हमें हो चुका है। माया क्या है?ब्रह्म क्या है? इसका सारा प्राथक्य हमें पता है, फिर भी हम इस संसार के झूठे सुखों के मोह में पड़ के अपने परमधाम के अखंड सुख, जो शब्दों से परे हैं; उसे हम जान बूझ कर गवां रहे हैं।

सखी री जान बूझ क्यों खोइए,
ऐसा अलेखे सुख अखंड।
सो जाग देखे क्यों भूलिए,
बदले सुख ब्रह्मांड।। कि. 78/1

ये कैसी बिडम्बना है? ये कैसा माया का फांस है? जो तारतम ज्ञान के द्वारा जागृत होने पर भी अपने अखंड सुख को छोड़ कर, माया के झूठे सुखों के पीछे हम दौड़ लगा रहे हैं। एक तरफ धनी हमें माया के दुःखों से निजात दिलाने हेतु अपनी वाणी के द्वारा परमधाम के अखंड सुखों की याद दिलाने में लगे हैं, तो दूसरी तरफ हम धनी को पीठ दिए हुए है। धनी की प्रेममयी राह को छोड़ कर, इस पिशाचनी माया के पीछे अपनी आँखे मूँद कर भाग रहे हैं। इस पिशाचनी माया ने आज तक सभी के सुख–चैन, प्रेम–विश्वास, भक्ति–भाक्ति इत्यादि सब कुछ छीना ही है, किसी को आज तक कुछ नहीं दिया। लेकिन हम सुन्दरसाथ को लगता है कि अबकी बार यह माया हमें सब कुछ दे देगी। इसलिए तो हम धनी को छोड़ कर, अपने अखंड सुख को छोड़ कर, इस माया के पीछे ही भागे जा रहे हैं। भागिये सुन्दरसाथ जी इस माया के पीछे कितना भागना है भागिये। इस माया के पास असत्, जड़, दुःख, जो कुछ भी है, वह सब आपको एक दिन अवश्य दे देगी। उस दिन आप दुःख भरे मन से माया का यह गीत अवश्य गाइयेगा– हाय–हाए, तौबा–तौबा, तौबा–तौबा, हाय–हाय.....! किन्तु यह भी याद रखिएगा कि उस दिन इस गीत को सुनने

वाला कोई नहीं होगा, खुद माया भी नहीं होगी।

जागियां तो भी, खेल न छोड़े,
फेर फेर दुःख को दौड़े।
धनी याद देत घर को सुख, तो भी छूटे ना लग्यो
जो विमुख।। परि. 3/189

इस माया कि काली छाँव तले जो भी सुख की आशा लेकर गया है, उसे दुःख के सिवाय और कुछ नहीं मिला। भाश्वत सुख तो मात्र राज जी के चरणों तलें है, अखंड परमधाम में है। लेकिन हमारा मन इस माया की झूठी तृष्णा में फँसे होने के कारण वह परमधाम में, राज श्यामा जी की शोभा–श्रृंगार में रमना ही नहीं चाहता है। उसे (हमारे मन को) अखंड सुख की प्यास तो है, किन्तु अमीरस को छोड़ कर वह माया की मृग तृष्णा से अपनी प्यास बुझाना चाहता है, जो कदापी सम्भव नहीं है। आज हमें परमधाम के अखंड सुख को पाने का जो शुभ अवसर मिला है, उसे हम दुनी के बदले गवांते जा रहे है। हमारे पास अनमोल हीरा तो है, किन्तु उसका मोल हमें पता न होने के कारण उसे माया की तुच्छ कौड़ी से बदलते जा रहें है। यही भूल एक दिन हमें गुनहगारों की कतार में खड़ा कर देगी।

दुनी बदले दीन को खोवहीं,
चले सो उलटी रीत।
सुपने के सुख कारने, लोभे किए फजीत।।

आज हमारी स्थिति ऐसी हो गई है कि दुःख रुपी विष का पान करते–करते हमें माया की ऐसी लत लग गई है कि अपने मूल–मिलावा, खिलवत खाना जो रुहों का असल ठिकाना है, उसका स्वाद लेना ही भूल गये हैं। जो कभी प्रेमरुपी अमृत सागर में गोता लगाया करती थी, वह आज विष रूपी सागर में गोता लगा रही है। क्या यही है परमधाम की ब्रह्मसृष्टियों का लक्षण, जो दोजक के झूठे सुख के स्वाद में अपने अर्श सुख के लज्जत को ही भूल जाए?

मूल मिलावा खिलवत का, अजु न आवे याद।
ए झूठी जिमी जो दोजख,
इत कहां लग्यो तोहे स्वाद।। कि.

यदि हम बेसक इलम पाकर भी माया के सुखों के कारण अपने अखंड सुख को भूल जाएं, अपने परमधाम को भी भूल जाएं, तो भला अपने प्राण प्रियतम श्री राज जी को रिझायेंगे कैसे? परमधाम के अखंड सुख का स्वाद लेंगें कैसे? यदि सारा जीवन हम राज जी को पीठ देकर माया की तृष्णा में ही फँसे रहेंगें तो परमधाम जाके राज जी से क्या हम अपनी नजर मिला पायेंगे?

जान बूझ के भूलिए, इलम पाए बेसक।
देखों दिल विचार के,
क्यों राजी करोगे हक।। छो.क.11/103

आज हम माया की फरामोशी के कारण अपने मूल घर परमधाम के अखंड सुखों को छोड़कर इस झूठी पापिनी माया के जाल मे फँसते चले जा रहे हैं। यही कारण है कि धनी का इश्क हमारे हृदय में नहीं आ रहा है। माया जनित हृदय में भला धनी का प्रेम कैसे आएगा?

अखंड सुख छोड़या अपना,
जो मेरा मूल मुकाम।
इस्क न आया धनीय का,
जाए लगी हराम।। कि.99/5

यदि कोई हराम खोरी का साथ ना छोड़े तो इसमें धनी का क्या दोष? धाम धनी ने तो अपनी वाणी के द्वारा उस परमधाम की पहचान करायी है, जहां मूल–मिलावे में युगल स्वरुप श्री राज श्यामा जी और हम सभी सुन्दरसाथ विराजमान हैं। जहाँ आनंद ही आनंद, प्रेम ही प्रेम है। ऐसे अखंड सुखमयी परमधाम को पीठ देकर यदि हम मायावी सुखों की तृष्णा में ही फँसे रहेंगे तो हमें अखंड सुख की प्राप्ति कैसे होगी?

मूल वतन धनिएँ बताइयां,
जित साथ स्यामा जी स्याम।
पीठ दई इन घर को,
खोया अखंड आराम।। कि.99/2

आज इस जागनी के ब्रह्मांड में धाम धनी श्री राज जी ने तो परमधाम का सम्पूर्ण खजाना (आत्मिक धन) ही हमें खोल कर दे दिया है। यहाँ तक कि अपने दिल का सारा भेद खेल कर आठों सागरों के अमीरस को हमारे ह्रदय में वाणी के द्वारा उड़ेल दिया है। लेकिन हाय रे मेरी किस्मत! हम उस रस (आनंद) को चितवनि के द्वारा आत्मसात् नहीं कर पा रहे हैं।

हमारा ईमान भी रेत के उस ढेर की तरह है, जो माया के एक झोंके से बिखर जाता है पूर्ण ईमान न होने के कारण ही माया अपना बल दिख कर हमें धनी के मार्ग से दूर कर देती है और हम अखंड सुख की लज्जत चख नहीं पाते हैं।

खोल खजाना धनिए सब दिया,
अंग मेरे पूरा न ईमान।
सो ए खोया मैं नींद में,
करके संग सैतान।। कि.99/6

आज हमारे पास यही वह सुनहरा अवसर है, जिसमें श्री अक्षरातीत के अखंड सुखों की लज्जत पायी जा सकती है । हम सब सुन्दरसाथ का नैतिक कर्त्तव्य है कि अक्षरातीत श्री राज जी जो सुख हमें देना चाह रहे हैं, उसकी प्राप्ति की राह में हम दौड़ लगाएं। यदि सुन्दरसाथ की जमात और तारतम वाणी को पाकर भी हम आत्मिक धन की प्राप्ति की और अग्रसर नहीं होते हैं और मात्र मायावी सुखों की इच्छा को ही पाले रहेंगे तो फिर हम में (ब्रह्मसृष्टि) और संसारिक लोग (जीव सृष्टि) में फर्क ही कहां रह जाएगा? जीव सृष्टि की करनी और हमारी रहनी में अन्तर ही क्या रह जाएगा? सुन्दरसाथ जी! जब हम जीव सृष्टि की करनी छोड़कर परमधाम की प्रेममयी रहनी को अपनायेंगे तभी जाकर हमें आत्मिक सुख और आत्मिक आनंद मिलेगा ।

सुख अखंड अछरातीत को,
इन समें पाइयत है इत।
कहा कहूं कुकरम तिनके, जो माहे रहे के
खोवत।। कि.78/6

परमधाम के एक पल के दीदार में इतना आनंद प्राप्त होता है कि उसके सामने करोड़ो बैकुंठ के राज्य भी कहीं नहीं ठहरते।

जरा सोचिए जिस एक पल के सुख के सामने करोड़ो बैकुंठ के सुख भी फीके पड़ जाते हैं, तो फिर इस मायावी संसार के झूठे सुख कहं ठहरेंगे? इतना सब कुछ जान कर भी हम अपने अमूल्य समय का एक–एक पल धनी की याद में, धनी के प्रेम में बिताने के बजाए माया की ब्यर्थ चाहनाओं में गवाते हैं तो यह समझदारी नहीं साथ जी! सबसे बड़ी नादानी होगी।

कई कोट राज बैकुंठ के,
न आवे इत के खिन समान।
सो जनम वृथा जात है, कोइ चेतो सुबुध
सुजान।। कि.78/2

हमारी समझदारी तो इसी में है कि हम अपनी नजर को माया से हटाकर परमधाम में लगाएं। जहां हमारी आत्माओं का असल आनंद छिपा हुआ है। हम चितवनि के द्वारा अपने आत्म चक्षु से श्री राज श्यामा जी के अखंड स्वरुप को देखें, जिसमें अनेक प्रकार के आनंद और सुख छिपे हुए हैं। उनके अखंड स्वरुप में आह्लाद उत्पन्न करने वाली अनेकों प्रकार की विशेषताएँ छिपी हुई हैं। जो आठों प्रहर आत्मा के दिल से अलग नही हो पाती। वह (आत्मा) पल–पल आठों जाम युगल स्वरुप के दीदार रुपी आनंद रस में डूबी रहती हैं। ऐसा अखंड सुख और आनंद हमारे युगल स्वरुप की भाोभा में है।

सत सुख कई सरुप में,
कई आनंद आराम।
कई खुसाली खूबियां,
अंग छूटे न आठों जाम।। सिन.1/12

माया के प्रभाव के कारण हमारी आत्मा भले ही आज अपने परमधाम के अखंड सुख से वंचित है। किन्तु जिस दिन उसे (आत्मा को) जरा सी भी अखंड सुख की लज्जत मिल जाएगी, उस दिन वह माया की सारी तृष्णाओं को छोड़ कर ब्रह्मानंद के अखंड सुखों के रस में डूबने के लिए तत्पर हो जाएगी। लेकिन यह तब ही सम्भव होगा जब हम अपना एक पल भी व्यर्थ में न गवांए। अपना एक–एक पल ब्रह्मवाणी के मनन में औंर श्री राज जी के चिन्तन (चितवनि) में बिताएं। धाम धनी की इच्छा के अनुसार अपना आचरण करें और सेवा कार्य इत्यादि में किसी भी प्रकार से भूल ना होने दे। प्रेममयी चितवनि की राह अपना कर, अपने धाम दिल में युगल स्वरुप की शोभा–श्रृंगार बसाकर अपने प्राण–प्रियतम को रिझा लें। यदि ऐसा करने में हम सफल हो जाते हैं तो निश्चय ही हमारा ह्रदय राज जी के प्रेम और आनंद से भर जाएगा। और हमारा इस संसार में आना भी सफल हो जाएगा । हम इत (संसार) भी और उत (परमधाम) में भी धन–धन हो जायेंगे–

एक साइत वृथा न गई, धनी किए सनकूल।
चले चित्त पर होए आधीन, परी ना कबहूं भूल।।
सो इत भी होए चले धंन धंन,
धाम धनी कहे धंन धंन।
साथ में भी धंन धंन हुइयां,
याके धंन धंन हुए रात दिन।। कि.78/9,10

विराट पट : एक दिग्दर्शन

विनोद प्रसाद तिम्सिना (प्रेमी), काठमाण्डौ, नेपाल

असल में विराट पट, निजानन्द सम्प्रदाय के अन्तर्गत सचिदानन्द ब्रह्म का नूरमय अखण्ड अक्षरातीत धाम, उनका सत् अंश अक्षर धाम, बेहद के चार क्षेत्र व अक्षरब्रह्म के अन्तसकरण (सत्स्वरुप ब्रह्म, केवल ब्रह्म, सवलिक ब्रह्म, अब्यात ब्रह्म) और क्षर ब्रह्माण्ड (आदि नारायण से पाताल लोक तक) के बारे में ज्ञान देनेका एक श्रोत के रुपमें जाना जाता है । दूसरे शब्दमें कहें तो, वर्तमान विश्व के लोगों की धार्मिक, सामाजिक समस्या (धार्मिक सामाजिक विभिन्नता) का समाधानद का रास्ता दिखाने वाला आध्यात्मिक जीवन दर्शन का वाहक निजानन्द सम्प्रदाय में उपलब्ध चार ज्ञान श्रोतमें से एक महत्वपूर्ण अंग के रुप में परिचित विराट पट दर्शन, आध्यात्मिक ज्ञान का एक महत्वपूर्ण आभूषण के रुप मे है ।

इसको श्री तारतम ज्ञान प्रदत एक आध्यात्मिक उपहार और सिर्फ एक शाश्वत परब्रह्म समझने और समझाने का आधारभूत श्रोत के रुप में भी लिया जाता है । वास्तव में यह ज्ञान किसी सम्प्रदाय की सम्पत्ति न रहकर स्वअध्ययन और अनुभवका श्रृजना कहना भी उत्तम होगा । साथ ही, वेद, उपनिषद, पुराण, परा विद्या, ब्रह्म विद्याका ज्ञान और समाजमें तारतम ज्ञानका दर्शन समझाने प्रस्तुत विशेष पुस्तक में से एक के रुपमें भी लिया जाता है ।

दिव्य ब्रह्मपुर धाम, अखण्ड अक्षरातीत धाम आदि नामों से परिचित उस नूरमय शाश्वत अखण्ड धाम में पूर्ण ब्रह्म श्री राज जी अद्वितीय सच्चिदानन्द, चिद्घन स्वरुप में विराजमान रहतें हैं । वो अपने आनन्द अंग श्री श्यामा जी और उनके अंग ब्रह्मअगनाओं के संग पच्चिस पख में अविछिन्न विचरण करतें हैं । इसके साथ, बाल स्वभाव के लीला करने वाले उनका सत अंग अक्षरब्रह्म जो श्री अक्षरातीत के अविभाज्य लीला हैं । अक्षरब्रह्म सेकेण्ड के छोटा अंश भाग में असंख्य स्वप्निक ब्रह्माण्डों का श्रृजन और नाश करने का खेल रचतें है ।

श्री अक्षरातीत ब्रह्म ने अपने ब्रह्म आत्माओं को, श्री अक्षरब्रह्म के द्वारा सृजीत असत, जड़, दुख के स्वप्निक व नाशवान ब्रह्माण्ड में भेजा । इसका दो उद्देश्य था ब्रह्म आत्माओं को पूर्णब्रह्म परमात्मा का अस्तित्व व वास्तविकता समझाने के लिए । 1) अक्षरब्रह्म को अक्षरातीत की किशोर लीला अवगत कराने के लिए ।

अक्षरब्रह्म जब ब्रह्माण्ड बनाने की सोचते हैं, वो अपना चार अन्तसकरण (सत्स्वरुप, केवल ब्रह्म, सवलिक ब्रह्म और अव्यात ब्रह्म) सहित प्रस्तुत होते हैं ।

इन अन्तसकरण सक्रिय होते ही मोहजल उत्पन्न होते हैं और उस पर अक्षरब्रह्म के कल्पना का विशाल सुनहला अण्डा दिखाई देता है । हजारों साल के बाद वो अण्डा फूटकर एक दिव्य शक्ति दिखाई देता है । वो शक्ति अपने इर्द गिर्द सिर्फ जल ही जल देखती है । नर (जल), आएन (रहने) अर्थात जल में रहने के वजह से उनका नाम नारायण रहता है । वो आदिनारायण से भी जाने जाते हैं । असल में ए अक्षरब्रहम के स्वप्निक रुप व मन की प्रतीक हैं । अथाह जलासय में अकेले पड़ने की वजह से अनेक होने की इछ्या से "एको अहं बहु श्याम" कहते हैं।

परिणाम स्वरुप त्रिदेव (ब्रह्मा, बिष्णु, महेश) सृजन होते हैं और उसके बाद स्वर्ग आदि का भी सृजन होता है । आदिनारायण और उनका ए सम्पूर्ण सृजन को क्षर ब्रहाण्ड कहा जाता है, जो स्वप्निक और नश्वर है । इसको भगवान नारायण का कुल शरीर माना जाता है । इसमे 14 लोक और 8 घेरा है, जिसको गीता भिन्न प्रति कहती है । इस 14 लोक मे से एक मृत्युलोक में हम मनुष्य अपना कर्म कर रहें हैं । इसी कर्म के आधार पर मृत्यु के बाद ऊपर व नीचे के लोकों में जाने का अधिकार रखतें हैं । 14 लोकों के नीचे गर्भोदक समुन्द्र है जहां शेषनारायण विराजमान रहते हैं ।

इसमें प्रलय की चर्चा करना भी आवश्यक होती है । धर्म शास्त्रों में चार प्रकार के प्रलय का जिक्र किया गया है । उनमे से पहला नित्य प्रलय है और उसका सम्बन्ध, मर्त्य लोक मे होने वाला प्रति सेकेण्ड मे जीव का मृत्यु से है । जो नियमित तवर से निरन्तर होता रहता है । दूसरा नैमितिक प्रलय कहा गया है और उसका सम्बन्ध, ब्रह्माजी का 1 दिन अर्थात चार युगों का हजार चक्र पुरा होने पर पाताल लोक से स्वर्गलोक (देवताओं का लोक) सहित तप लोक तक नाश होता है । तीसरा प्रातिक प्रलय कहा गया है और उसका सम्बन्ध, त्रिदेवके आयु समाप्ति वा सेवा को रुपान्तरण के समय 14 लोक जिसके भीर्श मे सतलोक है, जहां त्रिदेव ब्रह्मा, विष्णु, महेश रहने के साथ 14 लोक के आठ आवरण (भूमि, आप, अनल, वायु, खम, मन, बुद्धि, अहंकार) का नाश होता है । चौथा व अन्तिम महाप्रलय कहा गया है और उसका सम्बन्ध, अक्षरब्रह्म का सपना टूट जाने पर सम्पूर्ण स्वप्निक क्षर ब्रहाण्ड का नाश होता है । इसमे आदिनारायण शक्तिका अस्तित्व ही नाश हो जाता है । यहां क्षर ब्रहाण्ड नामका कुछ नही रहता है ।

आदिनारायण शक्ति का ब्रहाण्ड जिस तरह से अक्षरब्रह्म के अन्तसकरण से सृष्टी हुआ था उसी तरह अन्तसकरण में विलय होगा । इस अवस्था में नारायण शक्ति सूक्ष्म रुपमें ब्रह्माण्ड का अनन्त सूक्ष्म आत्माओं को अपने में समाहित करके अक्षरब्रह्म के मन में समा जाते हैं ।

अक्षरब्रह्म अपनी आनन्द शक्ति महालक्ष्मी जी और इश्वरी अंगनाओं के साथ श्री जमुना जी के इस तरफ जाग्रित अवस्था में रहते हैं । जमुना जी के उस तरफ अक्षरातित अपने किशोर लीला में 25 पख परमधाम में मग्न रहतें हैं । इस शास्वत अखण्ड धाम कें 25 पख को संक्षिप्त में समझने के लिए भक्त ने एक चौपाई बनाया है । " धाम तालाब कुन्जबन जोये, माणिक नेहेरे वन की सोहे । पश्चिम चौगान बडोवन कहिये, पुखराजी जमुना जी लइये । आठों सागर आठ जिमी के, ये पच्चीस पख धाम धनी के ।।"

यहाँ ध्यान देनें की बात है, धर्म शास्त्रों जैसे की, श्री भगवत गीता के १५ अध्याय के १६, १७, १८ श्लोक में तीनों ब्रम्हाण्ड (क्षर, अक्षर, उत्तमपुरुष (अक्षरातीत)) के बारेमें संकेत होते हुए भी, वक्त की जरुरत के अनुसार ही लोगो में प्रष्ट होता गया । सत्य युग में लोगो के बीच सिर्फ स्वर्ग लोक तक ही की जानकारी थी ।

तब के लोग स्वर्ग और वहाँ के देवी देवताओं को पाने के लिए साधना करते थे। त्रेता और द्वापर युग में लोगों के बीच चौदह लोक में से शीर्ष सत्यलोक (जहाँ ब्रह्मा, बिष्णु, महेश का निवास है) तक की जानकारी मिली तो उन्ही को पाने की साधना करने लगें। श्री मद्भागवत के दशम स्कन्ध में कहा गया है, २८ वें कलियुग में श्री अक्षरातीत की शक्ति इस धरती में आएगें और शास्त्रो में जो अक्षरातीत के बारे में किया गया सकेंत प्रष्ट करेगें । इसका मतलब है, इस कलियुग से पहले अखण्ड अनादि अक्षरातित का ज्ञान दुनिया में उजागर नहीं होने वाला था । शास्त्रों के पूर्व संकेतों के मुताबिक करीब ४०० साल पहेले सम्पूर्ण विधि एवं वतन सहित अखण्ड अनादि अक्षरातीत श्री सच्चिदानन्द धाम धनी जाहेर हुए । उनके द्वारा प्रदत ब्रह्मज्ञान से ब्रह्म आत्माओं के साथ 14 लोकों की आत्माओं का कल्याण होना है । लेकिन इस असत जड़ दुखः में जकड़े हुए लोगों को ब्रह्मज्ञान की बातों पर विश्वास करना मुकिल पड़ रहा है । और तो और, खुदको ब्रह्मज्ञान के साधक बताने वाले भी क्षर ब्रह्माण्ड की नश्वर शक्ति से पीछा नहीं छुटा पारहे हैं ।

इसकी वजह है ज्यादातर हमारी पूर्वीय सभ्यता की परम्परा में धर्म ग्रन्थो को अधिक महत्व तो देतें है, लेकिन सिर्फ पूजन करने के लिए, अध्ययन करके समझने के लिए नहीं । हमारे बहुत सारे सुन्दरसाथ जी भी श्री कुलजम स्वरुप व श्री तारतम सागर के ढेलीको ५ पुस्तों से सुन्दर से सुन्दर कपड़ों मे सलाहकर (लपेटकर) आलिशान सिंहासन में आकर्षक आभूषणों से सजाकर रखते हैं । लेकिन कभी अध्ययन करके धाम धनी के सन्देश को समझने की जरुरत नही समझते हैं। इसी लिए आज भी श्री धाम धनी के सिंहासन के कोने में स्वप्निक ब्रह्माण्ड की नश्वर शक्तियों की तस्वीर को भी सजाकर रखा हुआ दिखता आया है ।

श्री धाम धनी को, इस दुखः के मोहसागर में फसी हुई आत्माओं का हाल क्या होगा तबसे ही मालूम था । इसिलिए सम्पूर्ण धर्म शास्त्र के संकेत और निचोड़ को समेट कर विराटपट एक दिग्दर्शन की तरह हमें नाशवान क्षर ब्रहाण्ड, अविनाशी कूटस्थ अक्षर और उसके पार का शाश्वत अखण्ड अक्षरातीत धामधनी के बारेमें धर्म शास्त्रों का निचोड़ प्रस्तुत करके अपनी आत्मा का गन्तव्य निर्धारण करने का मार्ग प्रसस्त दिखाया गया है । इसके अनुसार हम, अपनी आत्मा के गन्तव्य चुन के उसको प्राप्त करने का आवश्यक आचरण व ठोस प्रयास करके अपनी आत्मा को परममोक्ष के लिए अखण्ड अविनाशी शास्वत अक्षरातीत परमात्मा के दिव्य चरणों में पहुचाँ सकते हैं ।

अर्स दिल की न्यामतें

अमित निजनान्दी, नागालैंड

प्यारे सुन्दरसाथजी! हमारे प्राणप्रियतम, धामधनी राज जी के हृदय में अनंत प्रेम, ज्ञान और आनंद का सागर लहरा रहा है। इस अनंत स्रोत से एक बूँद श्री महामति जी के धाम हृदय में आयी तो तारतम वाणी का अवतरण हुआ। अब इस परा विद्या रूपी ब्रह्मज्ञान से ब्रह्मआत्माओं के लिए धनी की पूर्ण पेहचान तथा संसार के जीवों के लिए अखंड मुक्ति का द्वार खुल गया है।

एक बूँद आया हक दिल से,
तिन कायम किये थिर चर।
इन बूँद की सिफत देखियो,
ऐसे हक दिलमें कई सागर।।

(सिनगार ११/४६)

धाम धनी तो सदा अपनी प्यारी रूहों को प्रेम के रस में सराबोर रखना चाहते हैं उनके दिल में निसदिन यही ख्याल रहता हैं कि किस प्रकार हम सखियों को अपने लाड़ प्यार से आनंद और खुशियों की नई नई लज्जत देतें रहें परन्तु धनी के लाड़, प्रेम को तो वही ब्रह्मात्मा अनुभव कर सकती है या जानती है जिसने अपनी आत्मिक दृष्टि को इस न वर संसार से हटाकर प्रेम और समर्पण की राह में अपने कदम बड़ा दिए हैं।

हक हैड़े में निसदिन,
सुख देउँ रूहों अपार।
जिन रूह लगी होये अन्दर,
सो जानेगी जाननहार।।

(सिनगार ११/४०)

जिस ब्राहात्मा ने ध्यान चितवनि में अपने प्राणेश्वर का दीदार करके उनकी शोभा, सिनगार को अपनी आत्मा के दिल में अखंड रूप से बसा लिया, उसी दिल को अक्षरातीत की बैठक या अर्श की संज्ञा दी गई है और जिस आत्मा का हृदय अर्श हो गया तो उसके और धनी के बीच की सारी दूरियां मिट जाती हैं। इस संसार में रहते हुए भी वह पल पल अपने प्रियतम की समीपता का अनुभव करती है, अर्थात् उसमें और धनी में एकरूपता हो जाती है, आत्मा और परमात्मा प्रेम के रंग में रंगकर ओतप्रोत हो जाते हैं।

तो अर्श कह्या दिल मोमिन,
जो इन दिलमें हक बैठक।
तो इत जुदायगी कहां रही,
जहां हकै आये मुतलक।।

(सिनगार ११/२५)

परब्रह्म अक्षरातीत के हृदय में अन्नत न्यामते हैं जिसे संसार के भाब्दों में नहीं व्यक्त किया जा सकता हैं और न ही मन और बुद्धि से ग्रहण या अनुभव किया जा सकता है इन अखंड की सम्पदाओं का ज्ञान और सुख तो केवल वही ब्राहात्मा जानती है जिसका दिल धनी का अर्श हो चुका है

जो निध हक हैड़ै मिने,
सो कई अलेखे अनेक।
सो सुख लेसी अर्श में,
जिन बेवरा लिया इत देख।।

(सिनगार ११/३६)

ए जो बातून गुन हक दिलमें,
सो क्यों आवे मिने हिसाब।
ए द्रस्ट मन जुबां क्या कहे ,
ए जो मसाला ख्वाब।।

(सिनगार ११/३४)

जिस आत्मा के दिल में धनी विराजमान हो जातें हैं, वहां अर्श की सारी न्यामते–निधियाँ भी स्वतः ही झलकने लगती हैं। धनी की संपूर्ण मेहर उस धाम हृदय में बरसने लगती हैं, और धनी की मेहर से हुकुम की भाक्ति, बेसक इलम के बातिनी भेद भी उस आत्मा को प्राप्त हो जाते हैं। धनी के चरण कमल जिस हृदय में बस गये वहाँ जोश की भाक्ति और विशुद्ध प्रेम की लहरें भी उमड़ने लगती हैं।

इतही हक मेहेरबानगी, इतही हुकम इलम।
तो इत जोश इस्क क्यों न आवहिं,
जो हकें दिल में धरे कदम।।

(सिनगार ११/२८)

ज्यों मेहेर त्यों जोश है, ज्यों जोश त्यों हुकम।
मेहेर रेहेत नूर बल लिए,तहाँ हक इस्क इलम।।

(सागर १५/२८)

प्यारे सुन्दरसाथ! जी हमारी धनी से अखंड निसबत के कारण ही इस न वर संसार में हमें तारतम ज्ञान रूपी बेसक इलम प्राप्त हुआ हैं, धामधनी ने स्वयं महामति जी के धाम हृदय में विराजमान होकर हमें यह परमधाम का ज्ञान दिया है। इस ब्रह्मविद्या के सागर में जो भी आत्मा गोता लगाएगी और धनी से अपनी अखंड निसबत की पेहचान करेगी उसे अव य ही वाहेदत और खिलवत के आनंद का रस भी प्राप्त होगा। निसबत के कारण ही धामधनी की मेहर की पल पल बर्शा हम पर हो रही हैं और अर्श की सारी न्यामतों की लज्जत भी हम अपने धाम हृदय में अनुभव कर सकते हैं।

ए क्यों होए बिना निस्बतें, इतही हुए वाहेदत।
निस्बत वाहेदत एकै,
तो क्यों जुदी कहिए खिलवत।।

(सिनगार ११/२)

पूरी मेहेर जित हक की,
तित और कहा चहियत।
हक मेहेर तित होत हैं,
जित असल है निसबत।।

(सागर १५/३)

यह संसार तो मोहजल रूपी दुखों का सागर है। यहाँ कहीं भी कोई भी सुखी नहीं है,सभी प्राणी किसी न किसी कारणव ा दुखी हैं, किसी के पास शांति नहीं हैं। तृष्णाओं की आग ने सबको जला रखा है चाहे साधु हो या दुश्ट। भाा वत सुख और आनंद तो केवल उसी के पास है जिसने उस पूर्णब्रह्म परमात्मा, अपनी आत्मा के प्राणेश्वर का दीदार दर्शन अपनी आत्मा के ह्रदय में किया हैं।

विस्वने लगी जाने ब्राध, माहें अगिन बले अगाध
ते ता पीडे दु'ट ने साध, नहीं अधखिणी समाध।

(रास १/२)

एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा
एकं रूपं बहुधा यः करोति
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीराः
तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम्

(कठोपनिषद् 5/1/12)

जो एक परमात्मा सबको वस में रखनेवाला है, जिसकी सत्ता सभी प्राणियों के अंदर है और अपने रूप को अनेक रूपों में प्रकट करता हैं ,उसका दर्शन अपने अंदर जो बुद्धिमान पुरुष करता है उसको ही शा वत सुख मिलता हैं, दूसरों को नहीं मिलता।

आवश्यक सूचना

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का **चौदहवां वार्षिकोत्सव,**
01 से 07 सितम्बर 2020 को मनाया जायेगा।

'दोपहर का सूरज' की संक्षिप्त भूमिका

अमर लाल सेठी

बाल्यकाल के संस्कार और धार्मिक साहित्य का पठन, चरित्र निर्माण में सहायक होते है। इसलिए बाल साहित्य का प्रकाशन में सतर्कता की आवश्यकता। आज लोग धर्मविहीन हो रहें, नैतिकता में गिरावट आ रही है। इसी कारण बच्चों में धार्मिक संस्कारों की भी कमी दिखाई दे रही है। बच्चों में धार्मिक प्रवृत्तियों को विकसित करके जीवन को विवेकपूर्ण दिशा देने के लिए प्रचुर मात्रा में बाल साहित्य का सृजन किया जाना चाहिए। इससे महामति श्री प्राणनाथ जी की वाणी जो सर्वधर्म का अंग है उसका विस्तार होगा। इसी उद्येश्य से दोपहर का सूरज का संक्षप्ति कर प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है कि यह संकलन, बालकों के चरित्र निर्माण में तथा आध्यात्मिक उत्थान में एक अनुपम उपहार के रूप में सहायक होगा।

गतांक से आगे...

फाल्गुन के महीने में चालीस दिन तक नाव की यात्रा करके, वे अरब पहुँचे, वहाँ जाकर उन्होंने गांग जी भाई का लिखा हुआ पत्र खेता भाई को दिया, जिसे पढ़ कर वे बहुत खुश हुये। श्री मिहिरराज जी को वे सब बातें बताते हुये कहने लगे कि 25 साल पहले कैसे वो यहाँ आये। धन तो बहुत कमाया, पर आत्म की शांति से दूर रहे। जल्दी ही श्री मिहिरराज जी उन का सारा व्यापार सभांल लिया। एक बार मिहिरराज जी व्यापार के काम के लिए बाहर गये थे, तो पीछे से खेता भाई की मृत्यु हो गई। वहाँ के राज्य के अधिकारी शेख सल्लाह थे। उन्होंने खेता भाई की सारी सम्पत्ति (धन–दौलत) पर अपना अधिकार कर लिया। श्री मिहिरराज जी ने खुद को खेता भाई का धर्म भाई बताकर सम्पत्ति वापस मांगी, पर उस मुस्लमान अधिकारी की नीयत खोटी थी। उसने सम्पत्ति देने से इन्कार कर दिया, और श्री मिहिरराज जी को मरवाने का फैसला किया। जब श्री मिहिरराज को इस बात की खबर मिली तो वे अपने रहने की जगह छोड़ कर बादशाह से मिलने गये।

दो महीने तक प्रयास (जतन) करते रहने पर भी उनकी बात न सुनी गई। एक दिन वह निराश (दु:खी) होकर आ रहे थे कि श्री राज जी के जोश की शक्ति ने किसी अरब के ही रहने वाले व्यक्ति के रूप में उनकी सहायता की। उसने कहा चिन्ता मत करो मैं तुम्हें एक पत्र (खत) लिख कर देता हूँ, जिसे पढ़ कर वे जरूर ही तुम्हारे साथ न्याय करेंगे।

उसने यह भी कहा कि जब बादशाह इधर से गुजरे, तब बिना डरे उनका पल्ला पकड़ कर खीच देना, और पत्र देकर कहना, कि अगर उन्होंने मेरा इन्साफ न किया तो जब सांतवे दिन अल्लाह न्याय (इन्साफ) के तखत पर बैठेंगे, तो मैं उस दिन अवश्य ही पल्ला पकड़ कर अपना इन्साफ करा लूंगा।

सांतवे दिन और कयामत की बात सुनकर बादशाह डर गया। वह यह कह कर नमाज पढ़ने चला गया, कि अल्लाह के हुक्म से मैं तुम्हारा इन्साफ अवश्य करूंगा। सुबह उठते ही बादशाह को अपनी कही बात याद आ गयी। उसने पूरे नगर में ढिंढोरा फिरवाया कि वो व्यक्ति आ जाये, जिसने मेरा पल्ला खींचा था। बादशाह के पूछने पर श्री मिहिरराज जी ने अपनी सारी आपबीती बता दी। बादशाह ने शेख सल्लाह को धमकी देते हुये कहा कि श्री मिहिरराज जी का सारा धन वापस कर दो नहीं तो मैं तुम्हें जड़ से उखाड़ दूंगा। राजदण्ड (सजा) के डर से उसने सारा धन वापस कर दिया। इधर खेता भाई की मृत्यु की खबर श्री निजानन्द स्वामी जी के पास पहुंच गयी। उन्होंने बिहारी जी और श्याम जी को श्री मिहिरराज जी की सहयता (मदद) के लिए भेजा। उन दोनों की मानसिकता और दोस्ती नीम और करेले जैसी थी। कुछ उधारी बाकी होने के कारण श्री मिहिरराज जी ने उनसे कहा आप दोनों सारा धन लेकर जाइये मैं उधारी बसूल करके जल्दी ही आता हूँ। उन्होंने नवतन पुरी पहुँचकर श्री सद्गुरू जी के आगे श्री मिहिरराज जी की बहुत बुराई की और उन पर चोरी का इल्जाम भी लगाया। श्री निजानन्द स्वामी दिल ही दिल सब जानते थे कि श्री मिहिरराज जी निर्दोष हैं, इसलिए चुप रहे। यह खबर सुनते ही बालबाई जो कि खेता भाई जी की बहन थी। श्री मिहिरराज जी की शिकायत लेकर जामनगर के राजा के पास चली गई कि वे उनके भाई का सारा धन हड़प गये हैं। वह कहने लगी कि सारा धन या तो मुझे मिले या राजकोष (राज का खजाना) में जाये। बालबाई की नादानी (गलती) के कारण सारा धन राजकोष में चला गया। अब राजा के पास की गयी चुगली को असफल होता हुआ देखकर, वह श्री निजानन्द स्वामी जी के पास गयी, और कहने लगी अगर आप ने श्री मिहिरराज जी की प्रणाम स्वीकार की तो मैं आत्महत्या कर लूंगी। यह कैसी लीला है धनी की कि एक हठी (जिद्दी) औरत की हठ के आगे न्याय का सिंहासन डगमगा गया। पाँच सालों की जुदागी के बाद सद्गुरू से मिलन, पर देखते ही मुख पर चादर ओढ़ (कर) लेना, बड़े–बड़े धैर्यशाली को भी विचलित (परेशान) कर सकता है। व्यथित (दुःखी) मन से वे वापस लौट गये। दिल दुःख से कराह उठा, हृदय (दिल) की पीड़ा कहें भी तो किससे कहें?माया उनके और सद्गुरू के बीच दिवाल बन गयी थी। अचानक मन में प्रेम भरी टीस उठी कि ''सद्गुरू महाराज! जिस प्रकार आपने मेरा प्रणाम स्वीकार नहीं किया, उसी प्रकार जब तक आप मुझे स्वयं (खुद) से नहीं बुलायेंगे, मैं नहीं आऊंगा।''

दो साल तब बड़े भाई के घर नवतनपुरी में ही रहते रहे। हृदय सद्गुरू से मिलने के लिए तड़पता रहा, पर मान रोकता रहा। विरह के पल वर्शों की तरह लम्बे लगने लगे। हर ऋतु विरह के आंसुओं का उपहार देने लगी। शायद धनी को यही मंजूर था। भाभी के द्वारा सद्गुरू के प्रति असहनीय बचनों को झेलने के बाद धरोल गये। वहां कला जी के पास जाकर मंत्री पद संभाला। दो वर्ष वहां बीत गये। एक दिन बादशाह की नौकरी हजूरी करते

हुये उन के मन में विचार आया कि इनकी चाकरी करने से तो अच्छा है मैं अपने सद्गुरू महाराज जी की ही शरण में चला जाऊं?अब देवचन्द्र जी के धामगमन का समय भी नजदीक था। उनके आए बिना मैं तन नहीं छोड़ सकता। पिता जी के बार–बार पुकारने पर बिहारी जी गये तो श्री मिहिरराज जी के पास, पर उनके मन में खोट और गद्दी का लालच होने के कारण उन्होंने श्री मिहिरराज जी को सच न बता कर कहा, पिता जी का स्वास्थ्य (सेहत) ठीक नहीं है, मुझे उन्होंने आपके पास अम्बर कस्तूरी लेने भेजा है। पिता जी के दूसरी बार भेजने पर भी बिहारी ने ऐसा ही किया। श्री निजानन्द स्वामी इस बार फिर से श्री मिहिरराज जी को बिहारी जी के साथ न देखकर बोले– मिहिरराज क्यों नहीं आए? क्या कोई भी ऐसा नहीं है, जो मेरे मिहिरराज को बुला कर लाये? बात बालबाई जी खड़ी सब सुन रही थी और भागी–भागी श्री मिहिरराज जी के पास गयी। अपनी गलती की क्षमा मांगते हुये उन्होंने कहा, ''मुझ से बहुत बड़ा अपराध हो गया मुझे माफ कर दीजीये। '' सद्गुरू महाराज आपकी याद में तड़प रहे हैं, जल्दी चलिये।

यह सुनते ही श्री मिहिरराज जी ने कहा, ''मुझे किसी ने स्पष्ट रूप में बताया ही नहीं कि वो मुझे इतना याद कर रहे है। '' सारा काम दूसरे को सौंप कर भाव–विह्वल होकर श्री मिहिरराज जी श्री निजानन्द स्वामी जी का दर्शन करने के लिए चल दिये, जिनके धाम हृदय में वह युगल स्वरूप विराजमान है, जिसके हुक्म की छत्रछाया में सभी आत्माओं की जागृति (जागनी) होनी है। श्री मिहिरराज जी से मिलकर श्री निजानन्द स्वामी खुश हुये और कहने लगे मिहिरराज! तुम्हारे आने से मेरा दिल खिल गया है। मैं अच्छे से जानता हूँ कि तुम बेदाग हो। 9 सालों कि जुदायी की पीड़ा की अग्नि अब हमारे मिलन के जल से शांत हो गयी है। मैं तुम्हें कितना याद करता था, और तुम्हें बुलाने के लिए मैंने बार–बार सुन्दरसाथ को भी भेजा।

''मेरे ऊपर कुछ लौकिक दायित्व थी, अब मैं उसे दूसरों पर सौंपकर आपके चरणों में आया हूँ, और मुझे किसी ने स्पष्ट रूप से बताया भी नहीं कि आप मुझे बुला रहे हैं। बालबाई जी के मुख से जैसे ही सुना कि आप मुझे बुला रहे हैं, मैं शीघ्र ही आपके चरणों में आया हूँ।

22 दिन तक श्री मिहिरराज जी सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के पास रहे। उन्होंने उनको भविष्य में होने वाली सारी बातों की जानकारी दे दी। शाकुण्डल और शाकुमार आत्माओं को जागृत करने पर खास जोर दिया। सुन्दरसाथ को आत्मिक सुख देने का उत्तरदायित्व सौंप कर उनके धाम हृदय में विराजमान हो गये।

सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के धाम गमन के बाद अभी ब्रह्मवाणी न उतरने के कारण सब ने यही सोच लिया कि हमारे अक्षरातीत तो धाम चले गये हैं सब अपनी–अपनी माया में उलझ गये। अब इस स्थिति में सुधार लाने के लिए बालबाई श्री मिहिरराज जो के पास गयी, और बिहारी जी को गादी पर बिठाने की बात की। श्री मिहिरराज जी ने कहा कि – धर्म के प्रचार के लिए आप मुझे जो भी राय देंगे, मैं उसे अवश्य स्वीकार (मानना) करूंगा। बालबाई खुशी–खुशी अपने धर चली गई। जल्दी ही सही समय देखकर श्री मिहिरराज जी ने अपने गुरूपुत्र बिहारी जी को गादी पर बिठा कर, उनके चरणों में प्रणाम किया। सब सुन्दरसाथ एकत्रित

(इकट्ठे) हुये, और आनन्द का वातावरण छा गया।

बिहारी जी को गादी पर बैठाया जाना बहुत से सुन्दरसाथ को पसन्द नहीं था, क्योंकि उनको आध्यात्मिक जगत का बिलकुल भी ज्ञान नहीं था। वे चर्चा में भी किस्से कहानियां ही सुनाते थे। गुरू गादी का सम्मान करते हुये श्री मिहिरराज जी उनकी चर्चा सुनने के लिए सबसे आगे बैठते थे। फिर सब सुन्दरसाथ को एकांत में ले जाकर परमधाम की गूढ़ रसभरी चर्चा सुनाते थे। जिसे सुनकर सुन्दरसाथ आनन्द में डूब जाया करता था। अब धीरे–धीरे सब को पहचान होने लगी कि सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी श्री मिहिरराज जी के ही अन्दर बैठकर चर्चा कर रहे हैं। इधर गादी पर बैठकर बिहारी जी सुन्दरसाथ के ऊपर अत्याचार (जुलम) करने लगे। अगर कोई कुछ कहता तो परमधाम न ले जाने की धमकी देते। उनके कहने पर श्री मिहिरराज जी को भी अपनी पत्नि का परित्याग (छोड़ना) करना पड़ा, क्योंकि उन्होंने बिहारी जी द्वारा मना करने पर एक सुन्दरसाथ को भोजन करवा दिया था जो कि नौ दिन से बिहारी जी के दरवाजे पर बिना कुछ खाये पड़ा था, पर उनको दया न आयी। उसका कसूर बस इताना था कि उसने दोनों समय चर्चा सुनकर प्रणाम करने की बजाय एक समय आने की आज्ञा मांगी थी।

इधर श्री मिहिरराज जी के मन में सुन्दरसाथ जी की सेवा करने का बहुत अधिक भाव था। घर परिवार के काम में उलझे रहने के कारण सुन्दरसाथ वाणी चर्चा में ज्यादा समय नहीं दे पाते थे। इसलिये श्री मिहिरराज जी सबको इकट्ठे करके उनके भोजन, कपड़े आदि का इन्तजाम करना चाहते थे। इस काम के लिए धन की जरूरत थी, इसलिये उन्होंने बिहारी जी से विचार विमर्श (सलाह) करके जामनगर के वजीर की दीवान गिरी का पद सम्भाला। उन्होंने सब सुन्दरसाथ के लिए भोजन कपड़ा एकत्रित (इकट्ठे) किया, पर बिहारी जी को यह भी अच्छा न लगा। क्योंकि उनके मन में डर था कि अगर श्री मिहिरराज जी से सुन्दरसाथ प्रभावित हो गये तो मुझे कौन पूछेगा। मैं तो मात्र नाम का ही गादीपति रह जाऊंगा। अपने मन में उनके प्रति इस द्वेश के चलते बिहारी जी ने वजीर के यहाँ चुगली कर दी। अब वहां का राजा और मंत्री कान के कच्चे होने के कारण, बिना जांच किये ही उन्होंने श्री मिहिरराज जी तथा उनके दोनों भाईयों श्यामल जी और उद्धव जी को हब्शे की जेल में नजरबन्द कर दिया।

हब्शे में मिहिरराज जी की आत्मा अपने प्रियतम के विरह में तड़प उठी। छः माह तक विरह में तड़पते–तड़पते शरीर हड्डियों का ढ़ाचा बन गया। था सिर सूखे नारियल की तरह लगने लगा। ऐसा लगने लगा जैसे शरीर में रक्त (लहू) तो है ही नहीं। विरह की अग्नि ने शरीर के मांस और रक्त को सूखने जैसा कर दिया। आखिर वह घड़ी आ ही गयी जब उनकी विरह की आहों से मजबूर होकर खुद सच्चिदानन्द परब्रह्म ने उनके सामने प्रगट होकर सारा दुःख दूर किया। अब एक अद्भुत दृश्य उनके सामने था। सिंहासन पर कभी परब्रह्म की आनन्द शक्ति श्यामा जी दिखाई देती तो कभी श्री देवचन्द्र जी। अब वे प्रायश्चित की अग्नि में जलने लगे कि जिनके दर्शन के लिए उन्होंने इतनी साधना की वे तो सद्गुरू रूप में उनके सामने साक्षात् विराजमान थे।

अक्षरातीत श्री राज जी श्री मिहिरराज जी को

साक्षात् दर्शन देकर, जागनी का सारा काम सौंप कर, उनके धाम हृदय में विराजमान हो गये। अब परमधाम की अलौकिक ब्रह्मवाणी का अवतरण (उतरना) शुरू हो गया। सबसे पहले रास ग्रन्थ उतरा। ब्रह्मवाणी के अवतरण के समय रास की रामतों के अद्‌भुत दृश्य प्रगट हो जाते। सब ओर प्रकाश ही प्रकाश प्रगट हो जाता। इस दृश्य को श्री मिहिरराज के साथ–साथ दोनों भाईयों ने भी देखा। परब्रह्म के आवेश से अवतरित ब्रह्मवाणी को उद्धव जी लिखते गये। हब्शे में रास, प्रकाश, शटऋतु तथा कलश की दो चौपाईयों का अवतरण हुआ। ब्रह्मवाणी के समय प्रकट होने वाली रास लीला के दृश्यों को जामनगर के वजीरों की रानियों ने भी देखे। वे समझ गयी कि ये कोई अलौकिक महापुरूश हैं। एक साल के बाद अहमदाबाद से वापस आने पर उन्होने अपने पतियों को बताया और कहा कि यदि आप विनाश से बचना चाहते हैं तो उन्हें सम्मान पूर्वक विदा दीजिए। वजीर न जांच करवाई तो पता चला कि श्री मिहिरराज जी बेकसूर हैं। उन्होने अपनी गल्ती पर पछतावा करते हुये श्री मिहिरराज जी से क्षमा मांगी और सम्मान पूर्वक वस्त्र आभूशणों के साथ विदा किया। श्री प्राणनाथ जी तीनों किताबें लेकर बिहारी जी के पास गये और सब बातें बतायी। शटऋतु की वाणी पढ़कर बिहारी जी तमतमा उठे। उन्होनें सोचा कि इस में तो स्पश्ट लिखा है कि अक्षरातीत इनके सिवा किसी को नहीं मिले है। यदि यह बात सुन्दरसाथ में फैल गई तो गादी की कुछ महत्ता न रहने से मुझे कोई नहीं पूछेगा। उन्होंने ब्रह्मवाणी का प्रसार रोकने का निर्णय लिया। उन्होने श्री मिहिरराज जी को कहा कि अगर तुम मुझे धाम धनी समझते हो तो इस ग्रन्थ का प्रचार करने की कोई जरूरत नहीं है। सुन्दरसाथ तो ब्रह्मवाणी के अमृतमयी शब्दों के लिए तरस रहा था पर बिहारी जी की कृपा से सम्भव न हो सका।

वहां से विःसः 1716 में श्री जी जूनागढ़ के पास नया गांव बसाने के लिए गये। वहां धोराजी गांव में नदी के किनारे उनको अपनी पूर्वजन्म की पत्नी तेज कुवंरी जी के रूप में मिली। तेज कुवंरि जी के पिता वीर जी भान के कहने पर उन्होनें उसका पाणिग्रहण किया आखिर आत्मा के सच्चे प्रेम ने दूसरे तन में अपने प्रियतम प्राणनाथ से मिलन करा ही दिया। दोनों के विवाह से चारों ओर खुशी की लहर छा गयी।

जूनागढ़ पहुँच कर श्री जी की भेंट (मिलन) कान्ह जी भाई नाम के एक सुन्दरसाथ से हुई। जो कि शास्त्रार्थ महारथी (सभी धर्म ग्रन्थों का अर्थ बताने वाले) हरजी व्यास जी के सेवक थे। समय मिलने पर वह श्री जी के चर्णो में आकर चर्चा का रसपान करते हैं।

एक बार कान्ह जी ने श्री जी को हरजी व्यास के बारे में बताया कि वे कहते हैं मैं इस चौदह लोकों की दुनिया का नहीं हूँ। उन्होने बताया कि मैं दो बातों दुःख लिए मर रहा हूँ। पहली मैंने ज्ञान की जिस बात को हाँ कह दिया, किसी ने ना नहीं कहा, जिसको ना कह दिया, किसी ने हां नहीं कहा। श्री जी ने कहा धनी की कृपा से वे जीवित रहेगा और मैं उस से चर्चा करके उसके सारे संशय (भ्रम) हटा दूंगा। कान्ह जी की सेवा से खुश होकर जब हरजी व्यास ने कुछ मांगने को कहा, तो उन्होंने कहा एक महात्मा है, मेरी इच्छा है आप उनको चर्चा सुनाये। अब श्री जी ने कहा, श्री मद्‌भागवत की। दो महीने

तक एक जिज्ञासु (जानने की इच्छा रखने वाले) की तरह उन्होंने कथा सुनी विनम्रता ही महानता का परिचय देती है। खुद अनन्त ज्ञान का सागर जिनके हृदय में विराजमान है, वह हरजी व्यास से ऐसे कथा सुन रहे हैं, जैसे कुछ जानते ही नहीं हो। अचानक एक दिन भागवत् के दसवें स्कन्ध में नारायण के ठिकाने का वर्णन आया, जिसमें कहा गया है कि एक हीरे का मन्दिर है, जिसका फैलाव चौरासी लाख योजन है।

श्री जी के पूछने पर कि यह किसका निवास है, वे बोले अक्षर ब्रह्म का। श्री जी बहुत नम्रता पूर्वक बोले, यह लौकिक महल इस ब्रह्माण्ड के ऊपर है, नीचे है, बीच में है या इसके बाहर है?हरजी व्यास कुछ भी विशेष रूप में न कह सके और श्री जी के ज्ञान के आगे नतमस्तक हो कर उनके चरणों में गिर गये। तब श्री जी उन्हें इस क्षर ब्रह्माण्ड से परे बेहद और इसके परे अनन्त परमधाम जो कि सदा अखंड नूरी और चेतन है का ज्ञान दिया, और कहा कि अपनी आत्मा को जागृत करने (जागने) के लिए तुम्हें वहीं का ध्यान करना चाहिए। ब्रह्मज्ञान के झरने का अमृत रस पीकर हरजी व्यास धन्य–धन्य हो गये। उन्होंने अपना तन मन श्री जी के चरणों में समर्पित (सौंप) कर दिया।

श्री जी के दिल में अन्तः (अन्दर) से प्रेरणा हुई कि नवतनपुरी में सुन्दरसाथ पर संकट (कश्ट) आने वाला हैं। वहां चलकर उनकी खबर लेनी होगी। श्री जी वहां से शीघ्र (जल्दी) ही नवतनपुरी आये। गुजरात के बादशाह कुतुबखान का आदेश जारी हो गया कि अगर जामनगर राज्य ने कर (लगान) न दिया, तो वे हमला कर देंगे।

श्री जी ने बिहारी जी से बात करके वहां की दीवानगिरी संभाली, तांकि सही समय पर कर वसूला जा सके। बादशाह के कहर से बचने के लिए दोनों तरफ से यह समझौता हुआ कि, अगर कर न दिया गया तो श्री मिहिरराज जी को फांसी दे दी जायेगी। बहुत कोशिश करने पर भी कर (अदा) न दिया जा सका। शर्त के अनुसार श्री जी को अहमदाबाद की जेल में डाल दिया गया। श्रद्धा, सेवा और समर्पण की प्रति मूर्ति, कान्ह जी भाई को भला यह कैसे सहन हो सकता था, कि उनके होते हुये श्री जी को फांसी पर झूलना पड़े। वे तेज कुंवरी जी के वस्त्र पहन कर श्री जी से मिलने गये। जेल में उन्होंने अपनी तेज कुंवरी जी वाले वस्त्र जबरन श्री जी को पहना दिये और खुद उनके कपड़े पहनकर बैठ गये। जिस तन में स्वयं परब्रह्म अक्षरातीत का आवेश स्वरूप विराजमान हो, उसे भला कौन फांसी पर लटका सकता है। पर माया के इस खेल में ब्रह्म आत्माओं को त्याग और समर्पण की कसौटी पर कसा जा रहा है। फांसी के दिन कान्ह जी की जोशीली आवाज में कजा और दोजख की बात सुनकर सत्ता के नशे में पागल बादशाह और सब दरबारी डर गये। उन्होंने सोचा यह कोई फकीर है, अगर इन्हें फांसी दे दी तो हमारा जड़ मूल से नाश हो जायेगा। नतीजा यह हुआ कि उन्हें कान्ह जी को छोड़ना पड़ा। उन्होंने खुशी–खुशी घर आकर सारी बात तेज कुंवरी जी को बतायी। अहमदाबाद से श्री जी दीपबन्दर गये। वहां जाकर श्री जी सुन्दरसाथ जयराम कंसारा से मिले, जो कांसे के बर्तन बनाता था। वह दिन रात माया में लिप्त था। श्री जी ने उसकी खंडनी करके उसे परमधाम की राह दिखाई। वहां श्री जी की चर्चा

सुनने के लिए लोगों की भीड़ बढ़ने लगी। 60 नये व्यक्तियों ने तारतम लिया। पुराने कथा सुनाने वालों में हलचल मच गयी, उनकी संख्या घट कर श्री जी की तरफ बढ़ने लगी। द्वेश (ईश्या) की अग्नि में जलने के कारण उन्होंने एक चुगल खोर को धन देकर पुर्तगाली बादशाह से शिकायत करने को कहा। जैसे ही वह दरबार में पहुँचा कि राज जी के जोश की शक्ति ने उसे एक मित्र (दोस्त) के रूप में समझाया कि तुमने उस महात्मा को अपने इश्ट देवों की निन्दा करते अपनी कानों से सुना है। मात्र कुछ धन के लालच में तुम उनकी झूठी चुगली करने जा रहे हो, क्या तम्हें इस परिणाम (नतीजा) भी पता है तुम्हारें कहने पर बादशाह उन पर जुल्म करेगा और उन महात्मा के मुख से निकली हुयी आहें खा जायेंगी। तब तुम्हें कोई नहीं बचा सकेगा। जल्दी ही वह चुगल खोर समझ गया और वापस चला गया। इधर इमान के कच्चे कुछ सुन्दरसाथ जो कि पुर्तगाली बादशाह के डर से घरों से भाग कर छिप गये थे, उनको भी शर्मिंदा होना पड़ा।

उस समय अरब के उन्मादी लोग हिन्दू स्त्रियों, बच्चों और आदमिओं को कैद कर लेते थे और पैसे लेकर छोड़ देते थे। तेज कुंवरी जी भी उनकी कैद में आ गयी एक तरफ से यह कारण बना श्री जी का दीपबन्दर से बाहर आने का, क्योंकि वहां के सुन्दरसाथ श्री जी को जाने नहीं दे रहे थे। जब भी वे जाने की बात करते भावुक हो उठते। श्री प्राणनाथ जी दीपबन्दर से चलकर पोरबन्दर, पाटन, कच्छ होते हुये मंडई आए। वहां प्रागमल, कुंवरबाई आदि बहुत से सुन्दरसाथ थे। माया में फंसे सुन्दरसाथ को जगाने के लिये उन्होंने चर्चा में खण्डनी भरे शब्द कहे, कि चर्चा, चितवनी छोड़कर आप माया में लगे हैं। यह माया तो आज तक किसी की भी नहीं हुई है। परमधाम को छोड़कर माया के झूठे सुखों में फंसे पड़े हो। इस बात पर विचार करो कि यहां किस लिए आये हो। वहां से चलकर कपाइए गये। वहां हरिवंश राय को जागनी की राह दिखाई। वहां से भोजनगर आये जहां हरिदास जी के पुत्र वृन्दावन रहते थे। भोजनगर से नलिये होते हुये श्री जी ठट्ठानगर पहुँचे।

क्रमशः

ज्योतिष

आजकल हमारे समाज में ज्योतिष का बहुत अधिक प्रचार–प्रसार हो रहा है। लेकिन यह धर्म और संस्कृति के लिये उचित संकेत नहीं है। मनुष्य का भाग्य उसके कर्म तथा पुरूषार्थ से तय होता है। वेद कहते हैं– "अयमेव हस्तो भगवान" – अर्थात् मेरा हाथ ही मेरा भगवान है। हम पुरूषार्थ को छोड़ कर भाग्य के भरोसे रहने लगे हैं। हमारा भाग्य बताने वाला ज्योतिषी स्वंय अपना भाग्य क्यों नहीं बना लेता?राम और रावण तथा कृष्ण और कंस की राशि एक ही थी परन्तु उनके कर्मों में दिन–रात का अन्तर था। इसी प्रकार, विवाह में लड़के या लड़की का मंगली होना कोई अनुचित नहीं है। यह तो उसके मंगलमय होने का प्रमाण है। वास्तविकता तो यह है कि ज्योतिष ने इस देश और समाज को गर्त में ढकेल दिया है। हमें इन आडम्बरों से बचना चाहिये।

हमारा समाज उन्नति के पथ पर

मधु सूदन मल्होत्रा, नूर महल

श्री प्राणनाथ जी की कृतियां भाषा, साहित्य और साधना की दृष्टि से इतनी महत्व पूर्ण हैं उन पर पूरा शोध कार्य न होने का मुख्य कारण यही है कि पहले तो प्रणामी साहित्य ज्यादातर मन्दिरों के महन्त व पुजारी कुलजम स्वरूप की प्रति को दर्शनीय मानते थे। वह किसी को पढ़ने अथवा इस की प्रतिलिपि नहीं करने देते थे। सम्भवतः प्रणामी समाज इस बात से डरते थे कि लोग श्री प्राणनाथ जी को (उनको समन्वयवादी दृष्टिकोंण के कारण) गलत न समझ बैठे और उन्हें मुसलमान न कहने लगें। इसीलिए श्री मुखवाणी को प्रणामी समाज तक ही सीमित रखना चाहते थे।

इन कठिनाइयों के बावजूद श्री प्राणनाथ जी और उन के सम्प्रदाय के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों ने कुछ कार्य किया है। कुछ पाश्चात्य लेखकों द्वारा व कुछ भारतीय लेखकों द्वारा थोड़ा कार्य किया गया। पाश्चात्य लेखकों में **R. B. Rassae, F. S. Grauj, H. H. Wilson** आदि ने अत्यन्त संक्षिप्त कार्य किया इन्हीं उल्लेखों के आधार पर डा. तारा चन्द्र, क्षिति मोहन सेन तथा भारतीय साहित्यकारों ने भी श्री प्राणनाथ जी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व का विवेचन किया और भी कई लेखकों ने श्री प्राणनाथ जी की कृतियों का उल्लेख किया है पर उन की वह सामग्री अपर्याप्त थी। इसलिए समाज को इतना लाभ नहीं हुआ। वह दर्शन करने और माथा टेकने की परम्परा तक सिमटे रहे।

श्री प्राणनाथ जी के जीवन पर प्रकाश डालने वाली सामग्री श्री प्राणनाथ जी के शिष्यों तथा विद्वत जनों की रचनाओं में ही मिलती है।

शिष्यों की रचनाओं में श्री लालदास जी कृत बीतक तथा श्री नवरंग स्वामी कृत बीतक आदि का नाम उल्लेखनीय है। इस के अलावा साम्प्रदायिक जनों ने निजानन्द चरितामृत, श्री जागनी लीला आदि कई जनों ने बीतक साहित्य पर गद्य तथा पद्य में काफी रचनायें लिखी हैं पर इन सभी कृतियों में मौलिक सामग्री का सर्वथा अभाव है।

शिष्यों तथा भक्त कवियों की रचनाओं के अतिरिक्त श्री प्राणनाथ जी की रचनाओं के संग्रह तारतम का जो कि तीन सौ वर्षों से अप्रकाशित रूप में था। प्रथम बार 1965 ई. में प्रकाशित हुआ। इस से पूर्व प्रकाशित आंशिक रूप से था। पूर्णरूप में नहीं था। प्रणामी साहित्य में श्री प्राणनाथ जी

की जीवनी सम्बन्धी सामग्री काफी उपलब्ध है। पर उन की साधना पद्धति पर विस्तार से विवेचन नहीं किया गया। श्री प्राणनाथ जी की रचना प्रकाश ग्रन्थ में एक सौ आठ पखों का जो वर्णन मिलता है उसी के आधार पर उन की अराधना, और अराधक और आराध्य का विश्लेषण हैं। इसी तरह दर्शन का विवेचन भी विशेषतः अखण्ड भूमि का वर्णन उपरोक्त ग्रन्थों के अलावा उन के परिकरमा ग्रन्थ के वर्णनों के आधार पर किया गया है।

प्रणामी समाज में नई उर्जा भरने के लिए सरकार श्री जगदीश चन्द्र जी ने सुन्दरसाथ जगाने का कार्य किया जिससे उन्हें जागनी रत्न से पुकारा जाता है। उन्होंने अपने मन को छूने वाली चर्चाओं से अपनी सादा तथा दिल में धर कर जाने वाली शैली से श्री प्राणनाथ जी के साहित्य को अपने अन्दाज से रखने का प्रयत्न किया।

उनके द्वारा लिखी गई ''संसार और मेरा भर्तार'' जिस में क्षर ब्रह्माण्ड, बेहद ब्रह्माण्ड, श्री कृष्ण तत्व, श्री प्राणनाथ जी की पहचान आदि बड़े रोचक ढंग से उल्लेख किया गया है। सत्य दर्शन आदि बहुत सारी परम सत्यमयी ज्ञान से परिपूर्ण रचनाएं लिखकर सुन्दरसाथ को ब्रह्मज्ञान का अमृत पिलाया।

सरकार श्री जगदीश चन्द्र जी के धामगमन के पश्चात् कार्यक्रमों को आगे सुन्दरसाथ तक पहुँचाने का कार्यभार पूज्यपाद श्री राजन स्वामी जी ने संभाला। उन्होंने सभी सुन्दरसाथ के सहयोग से सरसावा में नकुड़ रोड़ पर जमीन खरीदकर एक भव्य ''श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ'' की स्थापना की। जिसमें छोटे–छोटे बच्चों को स्कूली शिक्षा पूर्ण होने के उपरान्त उन बच्चों को वाणी के विद्वान बनाने की शुरूआत की। जिस से सारे समाज में यह बच्चे जो कि अब ज्ञान के भंडार बन गये हैं वाणी का प्रचार प्रसार कर रहे है। वाणी प्रचारों के केन्द्र बन सके जो कि आज तक समाज में किसी ने प्रसार नहीं किया। यहाँ पर बच्चों की पढ़ाई, कपड़ा, खाना, रहना सब ज्ञानपीठ की तरफ से होता है। यह सभी बच्चे ज्ञानवान हो कर सारे समाज में वाणी के प्रति सुन्दरसाथ तथा जो प्रवाही हैं उन को भी ब्रह्मज्ञान का अमृत पिलायेंगे। और पिला भी रहे हैं। आशा है कि हमारे ज्ञानपीठ के इस प्रयास को सुन्दरसाथ आगे जारी रखने के लिए पहले जैसा सहयोग देते रहें हैं आगे भी देते रहेंगे।

पूज्यपाद श्री राजन स्वामी जी ने इसी श्रृंखला को आगे बढ़ाते हुए पन्ना धाम में 2 एकड़ जमीन पर एक भव्य ज्ञान केन्द्र की स्थापना की है। जो इस कार्यक्रम की एक अगली कड़ी है। श्री राजन स्वामी जी का ब्रह्मज्ञान फैलाने का एक अपना अंदाज है। वह वेदों और शास्त्रों के उदाहरण देकर वाणी का ज्ञान जन–जन तक पहुँचा रहे हैं। जिस से दूसरे समाजों के लोग भी ज्ञानपीठ सरसावा से जुड़ रहे हैं। श्री राजन स्वामी से प्रार्थना है कि इसी प्रकार वाणी ज्ञान को सुन्दरसाथ व अन्य समाज तक पहुँचाने के लिए उन्हें अथाह शक्ति प्रदान करें। तांकि समाज अथाह ज्ञान को सदा प्राप्त करता रहे।

सदस्यता फार्म

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित **''तारतम मंजरी''** हिन्दी मासिक पत्रिका के सदस्य बनें।

कार्यालय– श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, नकुड़ रोड़, सरसावा

जिला– सहारनपुर, उत्तर प्रदेश, भारत 247232

मोबाईल न.– 7088120381 (कार्यालय) 8650851010,9725389547,9314193262

email- tartammanjari@gmail.com shri, prannathgyanpeeth@gmail.com

महोदय,

मैं ''तारतम मंजरी'' का वार्षिक/आजीवन शुल्क रु. ..... नकद/ मनी ऑडर/ बैंक ड्राफ्ट/ पे – इन – स्लिप ..... दिनांक .....

अंतर्गत अदा कर रहा हूँ।

अतः मुझे हर माह तारतम मंजरी निम्न पते पर भेजें।

नाम ..... पिता/पति का नाम .....

पता .....

..... राज्य ..... पिनकोड़ .....

फोन ..... व्हाट्सएप न. ..... e-mail .....

(विशेष नियम)

(1) सदस्यता शुल्कः वार्शिक 130/–, आजीवन 1200/–

(2) ड्रफ्ट ''तारतम मंजरी'' के नाम सरसावा, सहारनपुर में देय होना चाहिये।

(3) कृपया अपना नाम व पूरा पता स्पश्ट रूप से भरें।

(4) सदस्यता शुल्क ''साहित्य खाता'' (श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, ट्रस्ट) के खाता संख्या 1335000100118751@IFS CODE- PUNB0133500 (पंजाब नेशनल बैंक, सलेम्पुर(सहारनपुर)उ.प्र. में जमा करा सकते हैं।

सम्पादक

निर्माणाधीन गौशाला

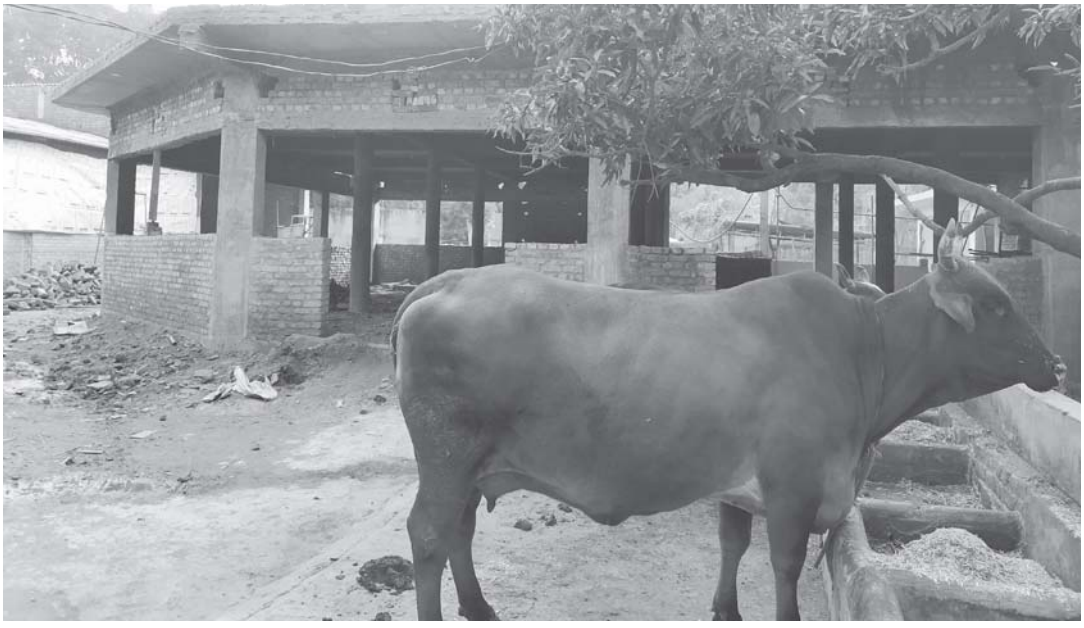

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी! सादर प्रणाम जी! श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी ज्ञानपीठवासियों, विद्यार्थियों, आचार्यों एवं आगुन्तक अतिथियों में निशुल्क किया जाता है। आप सभी सुन्दरसाथ एवं उदारमना दानदाताओं से श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, रहने के लिए उत्तम व्यवस्था हो, उसके लिए आधुनिक ढ़ंग से गौशाला का निर्माण कार्य होने जा रहा है, इसके लिए जो भी सज्जन एवं सुन्दरसाथ दान देना चाहें ज्ञानपीठ उनका स्वागत करता है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं, और आप आने में असमर्थ हैं तो कृपया ज्ञानपीठ के खाते पर राशि जमा करके सूचित कर सकते हैं। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपके द्वारा दिया गया दान गौवों के संवर्धन में ही लगाया जायेगा। धन्यवाद।

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की C.B.S.A/C संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया

1. खाता धारक का नाम–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रष्ट
   खाता संख्या–3290805513
2. खाता धारक का नाम–श्री ज्ञानपीठ प्रकाशन
   खाता संख्या– 3290804553

पता–शाखा–सरसावा, सहारनपुर उ. प्र. 247232

MICR-Code - 247016005

IFSC CODE-CBIN0282531

सामान्य खाता संख्या
1335000100111916
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
1335000100118751
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निमार्ण खाता संख्या
34971188767
भारतीय स्टैट बैंक
(11439) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन- 247232
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से प्रकाशित साहित्यों की सूची

क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य	क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
1.	श्री कुलजम स्वरूप (मूल)	700.00	36.	बोध मंजरी (नेपाली)	15.00
2.	श्री बीतक साहेब टीका	400.00	37.	बोध मंजरी (उड़िया)	15.00
3.	श्री रास टीका	150.00	38.	शाश्वत सत्य की ओर	15.00
4.	श्री प्रकाश टीका	300.00	39.	सत्य को बाटो (नेपाली)	15.00
5.	श्री कलश टीका	225.00	40.	संसार से परमधाम की ओर	20.00
6.	श्री खटरूती टीका	80.00	41.	श्री प्राणनाथ महिमा	20.00
7.	श्री किरन्तन टीका (हिन्दी)	300.00	42.	श्री ब्रह्मवाणी चर्चा	65.00
8.	श्री किरन्तन टीका (अंग्रेजी)	350.00	43.	निजानन्द संस्कार पद्धति	15.00
9.	श्री किरन्तन टीका (नेपाली)	300.00	44.	सेवा पूजा	30.00
10.	श्री खुलासा टीका	250.00	45.	मूल स्वरूप की ओर	80.00
11.	श्री सनंध टीका (अप्रकाशित)		46.	चितवनी	5.00
12.	श्री खिलवत टीका	180.00	47.	आर्ष ज्योति	120.00
13.	श्री परिक्रमा टीका	275.00	48.	तारतम के निर्झर	70.00
14.	श्री सागर टीका	170.00	49.	तारतम पीयूषम्	70.00
15.	श्री सिनगार टीका	300.00	50.	हमारी शाश्वत सम्पदा	60.00
16.	श्री सिन्धी टीका	150.00	51.	खाद्य परिशीलन	250.00
17.	श्री मारफत सागर टीका (अप्रकाशित)		52.	विनाश का प्रर्याय मांसाहार	60.00
18.	श्री क्यामत नामा टीका (अप्रकाशित)		53.	विराट नक्शा (केलेण्डर रूप में)	50.00
19.	श्री मुखवाणी संगीत	150.00	54.	सौवं क्यामतनामा	90.00
20.	विद्वददमनी	200.00	55.	अनमोल मोती	5.00
21.	पट दर्शन	200.00	56.	सागर के मोती	10.00
22.	धाम सुषमा	60.00	57.	नित्य पाठ	5.00
23.	जागो और जगाओ	100.00	58.	ये स्वर्णिम पल	10.00
24.	दोपहर का सूरज	60.00	59.	मुख्तार हिन्द	20.00
25.	प्रेम का चाँद	65.00	60.	शब–ए–मेयराज	15.00
26.	निजानन्द योग	60.00	61.	अफलातूनी इलम	20.00
27.	हमारी रहनी	50.00	62.	बुलन्द मुकदमा	40.00
28.	ब्रह्माण्ड रहस्य	40.00	63.	झूठ ही झूठ	60.00
29.	श्री मद्भागवत यथार्थम्	30.00	64.	यथार्थ दीपिका	30.00
30.	ध्यान की पुष्पांजली	70.00	65.	प्रश्नमाला	5.00
31.	कड़वे सच	50.00	66.	निजानन्द चित्रकथा	30.00
32.	तमस के पार (बड़ी)	40.00	67.	शेख जी मीर जी का बयान	20.00
33.	तमस के पार (छोटी)	20.00	68.	फरमान	30.00
34.	तमस के पार (पंजाबी)	40.00	69.	स्वास्थ्य के प्रहरी	30.00
35.	बोध मंजरी (हिन्दी)	15.00	70.	सत्यांजलि	40.00

सुभाषित वचन

- हम धर्म *को* मानते हैं पर धर्म *की* नहीं मानते ।
- भक्ति के बिना ज्ञान अंहकार को जन्म देता है जबकि ज्ञान का बिना भक्ति अंधविश्वास को जन्म देती है।
- सत्य सदैव तीन चरणों से गुजरता है - उपहास, विरोध और अन्ततः स्वीकृति।
- मन के अनुकूल हो तो धनी की कृपा और मन के विपरित हो तो धनी की इच्छा, इस तथ्य को यदि जीवन में स्वीकार करेंगे तो आनन्द ही आनन्द है।
- हमारी नीयत से ईश्वर प्रसन्न होते हैं, और दिखावे से इंसान ... यह हम पर निर्भर करता है कि, हम किसे प्रसन्न करना चाहते हैं।
- प्रकृति ने हमारे शरीर की रचना कुछ इस प्रकार की है कि ना तो हम अपनी पीठ थपथपा सकते हैं, और ना ही स्वयं को लात मार सकते हैं । इसलिए हमारे जीवन में मित्र और आलोचक होना जरुरी है ।।

BOOK POST

RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18-2019-21

प्रकाशक
पू.श्री राजन स्वामी जी

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232

सम्पादक
श्री एस. पी. आर्य
भूतपूर्व आई. ए. एस.

तारतम मंजरी पत्रिका के स्वामी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट, सरसावा
जिला–सहारनपुर, दूरभाष–8650851010
अवतरित न होने पर कृपया इस पते पर लौटाये।
धन्यवाद

सेवा में,